शहीद

सरदार भगतसिंह

लेखक—
रामदुलारे त्रिवेदी

मूल्य ।।=) (दस आना)

प्रथमवार २०००]

[सन् १९३८ ई०

प्रकाशकः—
त्रिवेदी ऐण्ड कम्पनी
नयागंज, कानपुर।

मुद्रकः—
ऐडवांस प्रेस,
नई सड़क, कानपुर

समर्पण

अजेय सेनापति

पं० चँद्र शेषर 'आज़ाद'

देश के अद्वितीय विसर्जन! तरुणों के ज्वलन्त वेग, मूर्तिमान

वीर रस, वीर शिरोमणि, तुम्हारी हुतात्मा का आलोक

आज भी मेरा पाथेय है। तुम्हारे अपने सैनिक

का जीवन, जिसे तुमने स्वयं रचा हो

और किसे समर्पण किया जासकेगा?

अतएव हे मेरे सर्व प्रिय बन्धु, वीर

गति प्राप्त, अजेय सेनापति

पं० चन्द्रशेषर 'आज़ाद'

तुम्हारी पुण्य स्मृति को

मैं अपनी यह

कृति भेंट

करता

हूं

—रामदुलारे त्रिवेदी।

समर्पण

अजेय सेनापति

पं० चंद्र शेखर 'आज़ाद'

देश के अद्वितीय विसर्जन ! तरुणों के ज्वलन्त ध्येय, मूर्तिमान
वीर रस, वीर शिरोमणि, तुम्हारी पुण्यात्मा का आलोक
आज भी मेरा पाथेय है। तुम्हारे अपने सैनिक
का जीवन, जिसे तुमने स्वयं रचा हो
और किसे समर्पण किया जा सकेगा !
अतएव हे मेरे सर्व प्रिय बन्धु, वीर
गति प्राप्त, अजेय सेनापति
पं० चन्द्रशेखर 'आजाद'
तुम्हारी पुण्य स्मृति को
मैं अपनी यह
कृति भेंट
करता
हूँ

दो शब्द

हिन्दुस्तान की आज़ादी की लड़ाई आज व्यक्तिवाद से उठ कर कुछ कुछ आदर्शवाद पर संचालित होने लगी है। सक्रिय रूप से आंदोलनों में भाग लेने के कारण आम जनता में राजनैतिक चेतना का संचार हुआ है। पर इन समस्त आंदोलनों की नींव में उन शहीदों का रक्त है जो बेनामों निशां मिटा गये हैं अपनी हस्ती को, मां के चरणों पर। वे अपने व्यक्तित्व को बढ़ाने की अभिलाषा लेकर कार्य क्षेत्र में नहीं उतरे थे। वे तो आये थे आदर्शवाद को ऊंचा करने के लिए। आम जनता को अपने कार्यों द्वारा उस आदर्शवाद पर चलने का प्रोत्साहन देने के लिए। शहीदों की याद करना व्यक्तित्व का प्रचार करना नहीं वरन उस आदर्श का प्रचार करना है। ध्यान रहे आदर्श का प्रचार—न कि साधन का प्रचार—करना है जिस पर शहीदों ने अपने अस्तित्व को बलिदान कर दिया। शहीद शिरोमणि श्री सरदार भगतसिंह का चरित्र आज इसी लिए जनता के सामने रखने का यह प्रयास किया गया है।

ये शहीद आज़ादी के परवाने थे। हाँ—सचमुच आज़ादी के परवाने थे, तभी तो उन्होंने अपनी पुष्प सी निष्कलंक, फलती फूलती, हंसती खेलती जवानी, हंसते २ मां के कदमों पर बलिदान कर दी। वे युवक थे। ऐसे युवक जिनकी नसों में हर वक्त बिजली दौड़ती रही, जिनका खून हरदम किसी अवज्ञात भविष्य की चिन्ता में तेजी से खौलता रहा। वे अपने कर्त्तव्य के पथ पर चाली

में आग धधका कर, असम्भव को सम्भव बनाना जानते थे। वे भारतीय राजनीति के अन्धकार पूर्ण आकाश मण्डल में धूमकेतु की तरह उदय हुये, उथलपुथल मचा दी, और चल दिये।

सारे भारत ने उनके कदमों पर अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की है। और की है इसलिए कि वे लफ्फाज और दिखावटी नहीं वरन कर्मशील, सच्चे देश भक्त थे। उनकी ज्वलन्त देशभक्ति, उनका उत्कट त्याग, उनकी अनुपमेय कर्मशीलता और उनकी महती वीरता हम नौजवानों के लिये आज ईर्ष्या और मार्ग प्रदर्शन की वस्तु है।

वे कैसे थे और क्या थे, यह आज वर्णन की चीज नहीं रही। वे जगजाहिर होचुके हैं। देश के गुलामी की कटीली कसक उनके दिल में चुभती थी। अर्द्धनग्न, और भूख की वेदना से व्याकुल असहाय मजदूर किसान और उनके बच्चों की सर्द आहों से वे तिलमिला उठे थे, बेचैन हो उठे थे। देश की अधोगति से वे पीड़ित और व्यथित थे। इसलिए इन आजादी के दीवानों ने मुल्क की गली गली की खाक छानी और अन्त में अपने आपको इसी प्रयत्न में खपा दिया, लगाये हुये लब पर मुहरे खामोशी।
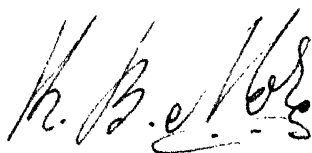
इस पुस्तक को इस रूप में पाठकों के सामने रखने में मुझे, हमारे अपने पत्र 'प्रताप' से विशेष सहायता मिली है। श्री हरिशंकर जी विद्यार्थी ने पुस्तक में प्रकाशित चित्रों के ब्लाक तथा प्रताप में प्रकाशित कुछ लेखों के छापने की आज्ञा भी दे दी।

इस प्रताप परिवार और विशेष कर श्रद्धेय श्री बालकृष्ण जी शर्मा, श्री सुरेशचन्द्र जी भट्टाचार्य और श्री हरिशंकर विद्यार्थी जी के विशेष अनुग्रहीत हैं ।

अन्त में यदि भारतीय नवयुवकों के दिलों के कुछ तार हिल उठे मां के बंधन काटने के लिए, सक्रिय रूप से आजादी के युद्ध में भाग लेने के लिये, इस जीवन चरित्र को पढ़कर, तो मैं अपने प्रयास को सफल समझूंगा ।

—रामदुलारे त्रिवेदी

K. B. [illegible]

सरदार-भगतसिंह

पूर्वाभास

लाहौर पुलिस चौकी के पास उस दिन लोगों ने धांय धांय की आवाज़ सुनी, और क्षण भर बाद ही देखा-लाहौर पुलिस के डिप्टी सुपरिन्टेन्डेन्ट-कप्तान सेन्डर्स का शरीर बेजान हो जमीन पर पड़ा लोट रहा है। कान्स्टेबुल चाननसिंह जो कप्तान की सहायता को बढ़ा था वह भी उसी राह का राही बन गया है।

इस घटना के पीछे किसी चीज़ का इतिहास था। स्व-भाग्य निर्णय के अधिकार से वंचित कर भारत के भाग्य का फैसला करने के लिए साम्राज्यवादी ब्रिटेन ने सात सयानों का एक कमीशन-सायमन कमीशन भेजा। नरम, गरम देश के सभी दलों ने इसका एक स्वर से विरोध किया, पर कमीशन भारत पधारा, स्थान २ पर काले झण्डे से उसका बहिष्कार हुआ और इसी बहिष्कार का नेतृत्व करने में पुलिस ने देश के प्रमुख नेताओं को भी बुरी तरह लाठियों से पीटा। युवक हृदय सम्राट पंडित जवाहरलाल नेहरू और माननीय पन्त जी की हड्डियां आज तक उन लाठी के चोटों की गवाही देती हैं। और लाहौर में पंजाब केशरी लाला लाजपतराय जी तो इतनी बुरी तरह पीटे गये कि अन्त में वे उठ न सके, उनका देहान्त ही होगया।

देश के अनेकों बड़े से बड़े नेता दिन दहाड़े, आम जनता की आंखों के सामने, गैर क़ानूनी ढंग से क़ानून के ठेकेदारों के हाथों पीटे गये। उन्हें मौत के मुंह में जान-बूझ कर ढकेल दिया गया, पर कोई भी चूं न कर सका। अपनी इस लाचारी, बेबसी और बेकसी से, देश बेचैन हो उठा! उसे उन्माद छागया, उसके दिल में झुंझलाहट पैदा हुई, वह इस राष्ट्रीय अपमान का प्रतिकार, किसी न किसी रूप में करने को बेक़रार हो उठा, इस घटना को लेकर देश के समाचार पत्र अग्रलेख लिख रहे थे। वे देश के नवयुवकों के उत्तेजित हो जाने की आशंका प्रकट कर रहे थे।

स्वर्गीय लाला जी के लिए की गई कलकत्ते की शोक सभा में हज़ारों मनुष्यों की भीड़ में स्वर्गीय देशबन्धुदास की पत्नी स्वर्गीया बासन्ती देवी जी ने भाषण देते हुए कहा था—हमारे बड़े से बड़े नेता इस प्रकार कायरता पूर्ण वार करके समाप्त कर दिए जावें और हम उफ़ न कर सकें? क्या आज देश में एक भी नौजवान देशके अपमान का बदला लेने का साहस नहीं रखता? दो शब्दों में देश अपने राष्ट्रीय अपमान का बदला चाहता था। और १७ दिसम्बर १९२८ को रिवाल्वरों ने आग उगली, वे गर्ज उठे। जनता के अभिलाषा की पूर्ति हुई। देश की रगों में बिजली सी दौड़ गई; कुछ गर्मी सी महसूस हुई। बेबसी और बेकसी का जाल कुछ ढीला होता, कुछ टूटता सा, महसूस हुआ। जनता उसको जानना चाहती थी जिसने इस प्रकार अपने को खतरे में

डालकर कुछ किया था पर कोई मार्ग जानने का न था, उसका अस्तित्व रहस्य के परदे में छिप गया था।

❀ ❀ ❀

भारत की राजधानी, चंचला देहली में सेन्ट्रल असेम्बली का अधिवेशन चल रहा था, पब्लिक सेफ्टी बिल पेश हुआ, बहस हुई, वोट लिये गये। एकाएक भवन में एक धड़ाका हुआ धुवां छागया। बड़े २ सरकारी अधिकारी जो तुर्रमखां होने का दावा पेश कर रहे थे भागते नजर आये, सभा भवन सूना होगया आधे घंटे बाद पुलिस सदल बल आई, और दो नवयुवक जो दर्शक गेलरी में खड़े थे बम फेंकने के अपराध में गिरफ्तार किये गये। देश के यह दो नौनिहाल थे सरदार भगतसिंह और वीरवर बटुकेश्वरदत्त।

गिरफ्तारी के बाद सरकार की ओर से कहा गया कि यह दोनों युवक केवल असेम्बली बम कांड के ही अभियुक्त नहीं हैं वरन लाहौर सांडर्स-हत्या कांड के भी मुलजिम हैं। सीधे और भोले दिखाई पड़ने वाले यह शिक्षित युवक खूनी और हत्यारे हैं। जनता को इनसे कोई सहानुभूति न होनी चाहिये। पर जनता ने उत्तर में कहा:—

"ब० के० दत्त जिन्दाबाद" "भगतसिंह जिन्दाबाद"

बच्चा बच्चा गर्ज उठा:—

"बी० के० दत्त जिन्दाबाद" "भगतसिंह जिन्दाबाद"

"इन्कलाब जिन्दाबाद"

वंश-परिचय

भारतीय जनता के हृदय में इस प्रकार घर बना लेने वाले हमारे चरित्र नायक, सरदार भगतसिंह ने लायलपुर ज़िले के एक मशहूर सिख वंश में जन्म लिया था। इनके पूर्वज महाराजा रणजीतसिंह के समय "खालसा सरदार" के नाम से मशहूर थे। पचशिम में ख़ूंख्वार पठानों और पूर्व में शक्तिशाली अंग्रेजों के खिलाफ़ सिक्ख साम्राज्य फैलाने में इन लोगों ने सिख शासकों को काफ़ी मदद पहुंचाई थी। उनके लिए लड़ाई के मैदान में अपना ख़ून बहा कर पुरस्कार स्वरूप काफ़ी जायदाद हासिल की थी।

भगतसिंह के पितामह एक बड़े भारी ज़मींदार थे। ८० वर्ष से ज्यादा के होजाने के बावजूद आज भी वे काफ़ी हट्टे कट्टे हैं। प्रथम लाहौर षड्यन्त्र केस में आपने काफ़ी दिलचस्पी ली थी। आपकी नस २ में राष्ट्रीयता कूट २ कर भरी हुई है। सरदार बहादुर सिंह और दिलबागसिंह आदि इनके भाई बन्धु सरकार की राजभक्त प्रजामें अपना सानी नहीं रखते और फलस्वरूप आज वे धन से हरे भरे हैं, ऊंचे दर्जे के रईसों में उनकी गिनती है। पर सरदार अर्जुनसिंह ने एक दूसरे ही पथ का अनुसरण किया। इस राह का राही न तो धन कमा सकता है और न नाम ही, बे-नामों निशां हस्ती मिटा देना ही इस राह की ख़ूबी है। सरदार भगतसिंह की दादी श्रीमती जयकौर एक आदर्श और वीर महिला

हैं, पुत्र और पौत्रों का पालन पोषण आपने ही किया है, अपने ढंग से। प्रसिद्ध क्रान्तिकारी अम्बाप्रसाद सूफ़ी जिन्होंने सरकार के काश्मीर हड़पने वाले षड्यंत्र का भंडाफोड़ किया था। और जो उत्तरी भारत में शसस्त्र विप्लव कराने के प्रयत्न में दिन रात जुटे रहते थे। इस परिवार में बराबर आया जाया करते थे, एक बार जब वे सरदार अर्जुनसिंह के यहां थे, पुलिस ने मकान घेर लिया वह सूफ़ी साहब को गिरफ्तार करना चाहती थी, किन्तु इस वीर महिला ने उन्हें बड़े ही साहस और बुद्धिमानी से, पुलिस को आंखों में धूल झोंक साफ़ बाहर निकाल दिया। अब भी आप सूफ़ी साहब की देश भक्ति के किस्से बड़े ही प्रेम और श्रद्धा से सुनाया करती हैं।

सरदार अर्जुनसिंह के तीन पुत्र थे। सरदार किशनसिंह, सरदार अजीतसिंह और सरदार सुवरनसिंह। पंजाब में यह तीनों भाई अपनी देशभक्ति के लिए प्रसिद्ध हैं। परिवार का परिवार तपा, कसा, निखरा देशभक्त परिवार है। कैद, निर्वासन और दरिद्रता के द्वारा इनको देशभक्ति कसौटी पर कसी जा चुकी है।

पंजाब केसरी, नरवीर स्व० लाला लाजपतराय जी को राजनीति में सरदार अजीतसिंह ने ही घसीटा ऐसा कहा जाता है। सरदार अजीतसिंह धनवान व्यक्ति थे, पर मुल्क की आज़ादी के लिए, स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए, देश को संगठित करने के उद्देश्य से, उन्होंने अपने गार्हस्थ जीवन के सुखों को ठोकर मार दी।

पंजाब सरकार ने इस ज़माने में, सूबे के कुछ ग़ैरआबाद ज़िलों को आबाद करने के विचार से, लोगों को वहाँ बसने के लिए उत्साहित किया, उन्हें कुछ सुविधायें दीं। पंजाब के किसान जिन्हें वहाँ जमीदार कहते हैं, जो वहां जाकर बसे उन्हें ज़मीन के महसूल, मकान बनाने आदि की सुविधायें मिलीं। ज़मीन को उपजाऊ बनाने के ख़याल से नहर निकाली गई और शुरू शुरू में उसकी आबपाशी की दर भी काफ़ी कम रक्खी गई, लेकिन जब ज़मीन आबाद हो गई, ज़मीन को मेहनत कर के किसानों ने ठीक कर पाया, और उसमें कुछ पैदावार होने लगी। जब यह ज़मींदार नामधारी किसान किसी तरह पेट भर रोटी पाने लगे, तो सरकार की सख़्तियाँ शुरू हुईं। लगान और आबपाशी बढ़ा दीगई। फलस्वरूप किसानों में असन्तोष पैदा हुआ। अपने ख़ून पसीना की कमाई पर आक्रमण होते देख वे तिलमिला उठे। उनमें चेतना का संचार हुआ, वे संगठित हुए पर इस समय एक सुयोग्य नेता की उनमें कमी थी। सरदार किशनसिंह और सरदार अजीतसिंह ने इस कमी को पूरा किया।

इन्हीं दिनों कलकत्ते में स्वर्गीय दादाभाई नौरोजी के सभापतित्व में राष्ट्रीय कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन था, सरदार किशनसिंह और सरदार अजीतसिंह कलकत्ते पहुँचे। यह पहला अवसर था जब देश में किसी ने स्वराज्य शब्द का प्रयोग किया हो। सभापति ने अपने भाषण में देश को स्वराज्य प्राप्त करने की आवश्यकता बताई थी। स्वर्गीय लोकमान्य तिलक भी इस

अधिवेशन में गये थे। कलकत्ता शहर में उनके कई व्याख्यान हुए। लोकमान्य उस समय की कांग्रेस राजनीति से कई क़दम आगे चलते थे। उनकी विचारधारा बिलकुल अलग थी, दोनों सरदार भाइयों पर इनका बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा। भविष्य का अपना कर्तव्य यहीं निश्चित करके वे लौटे यहां से लौटकर लाहौर को उन्होंने अपना केन्द्र बनाकर जोरों से किसान आंदोलन प्रारम्भ किया। उन दिनों प्रेसों की इतनी बहुतायत न थी। साधारण लोग इतना आगे नहीं बढ़े थे। वे सहायता करने से घबराते थे। नोटिस वगैरह छपवाना मुश्किल हो जाता था। पर धुन के पक्के अपना काम खुद करते हैं। गली गली घंटा बजा कर तीनों सरदार भाई सभाओं का खुद ऐलान करते थे। और सभायें करते थे। जिसमें १० हज़ार किसानों तक की उपस्थिति होती थी।

इन लोगों ने "भारत माता सोसायटी" नामक एक संस्था की स्थापना भी की थी। और मेहता आनन्दकिशोर के सम्पादकत्व में "भारत माता" नामक एक उर्दू मासिक प्रकाशित किया। पंजाब के प्रसिद्ध कवि लालचन्द जी फ़लक, जिन्हें केवल कविता लिखने के अपराध में बाद को आजीवन कारावास का दण्ड मिला था, और जो कालेपानी भेज दिये गये थे। इसमें अपनी शायरी प्रकाशित कराते थे। उन्हीं दिनों स्व० लाला जी का "पंजाबी" नामक अंग्रेजी दैनिक निकलता था। लाला जी हृदय से इस आन्दोलन के समर्थक थे। और उनका पत्र बराबर आंदोलन का प्रचार कर रहा था।

देश में इन्हीं दिनों एक और तूफान उठ खड़ा हुआ था, लार्ड कर्ज़न की कृपा से बंगाल के दो टुकड़े किये गये थे, और विरोध स्वरूप देश में एक ज़बर्दस्त आन्दोलन छिड़ गया था, चारों ओर स्वदेशी की धूम मच गई। पंजाब पर इसका कोई प्रभाव न पड़े यह ना मुमकिन था। देशभक्तों का यह दल खाना पीना भूल, दिन रात की चिन्ता न कर, जनता में अपने भाषणों द्वारा जीवन फूंक रहा था।

सरदार किशनसिंह, सरदार अजीतसिंह सरदार सुवरनसिंह लाला लाजपतराय और सूफी अम्बाप्रसाद इस अवसर से लाभ उठाकर जनता को स्वतंत्रता के लिये लड़ने को तय्यार करने में जुट पड़े। लाला लाजपतराय, सूफी अम्बाप्रसाद और सरदार अजीतसिंह जी के व्याख्यान आग बरसा रहे थे। फल स्वरूप पंजाब में जोश की एक लहर दौड़ गई। वह उठ खड़ा हुआ।

नौकरशाही के लिये चुप रहना असम्भव था, उसने वार किया। आधुनिक भारत के इतिहास में सन् १९०७ में १८१८ का तीसरा रेगुलेशन पहले पहल काम में लाया गया। उसके बाद तो इस काले क़ानून ने ब्रिटिश साम्राज्यशाही का बहुत ही उपकार किया। बंगाल और पंजाब दोनों प्रांतों पर उन दिनों इस क़ानून का कस कर वार किया गया। लाला लाजपतराय और सरदार अजीतसिंह इसके शिकार बने। मांडले के क़िले बर्मा में नजरबन्द करके चन्द महीनों ब्रिटिश सरकार ने इनकी मेहमान-दारी की। इसओर सरदार किशनसिंह जी को नैपाल सरकार से

सहायता प्राप्त करने की सूझी, वे साधू का वेष धर कर नेपाल रवाना हो गये और सरदार सुवरनसिंह जी राजद्रोह के अभियोग में सज़ा देकर जेल में ठूंस दिये गये।

जन्म

आश्विन शुक्ल तेरस, संवत १९६४ को शनिवार के दिन प्रातः ६ बजे सरदार किशनसिंह के घर द्वितीय पुत्र का जन्म हुआ। इसी दिन सरदार किशनसिंह जी के नेपाल से वापस लौट कर लाहौर पहुँच जाने और मांडले से सरदार अजीतसिंह जी के रिहा होकर भारत रवाना होने की खबर पहुँची, इतना ही नहीं, सरदार सुवरनसिंह जी मुक्त होकर घर पहुँच गये। इस प्रकार भगतसिंह की दादी को जहां एक ओर पौत्ररत्न मिला वहीं दूसरी ओर अर्से से बिछुड़ हुये उनके तीनों पुत्रों के मंगलजनक समाचार भी मिल गये। सुखद, पर साथ ही आश्चर्यजनक संयोग था यह। सरदार भगतसिंह की दादी इन घटनाओं से बहुत प्रसन्न हुईं, और वे बालक को "भागों वाला" अर्थात् भाग्यवान कहने लगीं परिणाम स्वरूप बालक का नाम रखा गया "भगतसिंह"।

बालक भगतसिंह घर में सबको प्रिय था उसकी चाची (सरदार अजीतसिंह की पत्नी) का वह प्राणों से प्रिय था, भगतसिंह उन्हीं की गोदी में, पले, खेले, और बातें सीखीं।

मांडले से लौट कर सरदार अजीतसिंह जी ने फिर अपनी राह पकड़ी, पुलिस को खटका, गिरफ्तारी का वारंट निकला, बड़े

बड़े पुलिस अधिकारी, जो नाक पर मक्खी नहीं बैठने देते थे, सरदार अजीतसिंह की तलाश में घूमने लगे, और सरदार अजीतसिंह जी ने इन सब को नाचीज़ मानकर अमृतसर में जाकर डेरा डंडा जमाया, अपने इसी अज्ञातवास के ज़माने में आन्दोलन सम्बन्धी उर्दू में कई किताबें लिखीं और अपना काम करते रहे। फिर अपने ही कुछ लोगों की विश्वासघातकता का परिचय पाकर वे सुविधा निकाल हिन्दोस्तान से बाहर करांची के रास्ते फ़ारस चले गये। सूफ़ी अम्बाप्रसाद पहिले ही वहां पहुँच गये थे। सरदार साहब भी वहीं जा बसे। आपने वहां राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेना शुरू किया। एक दिन कुछ उपद्रव हुआ आप लोग पकड़े गये, सरदार साहब तो किसी प्रकार वहां से निकल कर टर्की में कुस्तुन्तुनियां पहुँच गये, वहां आप कुछ दिनों रहकर फ्रांस और उसके बाद अमेरिका के ब्रेजिल में जाकर रहने लगे पर सूफ़ी अम्बाप्रसाद कहा जाता है ब्रिटिश क्रोध के शिकार बने, उन्हें फ़ारस में ही समाप्त कर दिया गया।

उस ज़माने की जेल आज की जेल न थी परिणाम स्वरूप सरदार सुवरनसिंह जी तपेदिक़ के शिकार बनकर घर लौटे और ६ महीने बाद उनका देहान्त हो गया। इस प्रकार इस परिवार ने आज़ादीकी बलिवेदी पर अपनी दो अमूल्य निधियां भेंट चढ़ादीं।

शिक्षा

सरदार भगतसिंह के बचपन के बारे में हमें कुछ ज्यादा पता नहीं है, पर कोठरियों की अपेक्षा विस्तृत खुले मैदानों को वे ज़्यादा

पसन्द करते थे।

अपने बड़े भाई जगतसिंह के साथ वे बांगा के प्राइमरी स्कूल में भर्ती कराये गये। ११ वर्ष की अवस्था में ही बड़े भाई जगतसिंह जी का देहान्त हो गया। बालक भगतसिंह के दिल पर इसका कड़ा आघात लगा। इससमय सरदार किशनसिंह लाहौर के पास नवानकोट में जहां उनकी कुछ जमीन जायदाद है रहते थे। भगतसिंह भी यहीं चले आये। भगतसिंह को स्कूलमें भर्ती करना था। सिख बालक केवल खालसा स्कूल में ही भर्ती हों ऐसा कुछ नियम बन गया था सिख बिरादरी में। पर उस स्कूल के अधिकारी देश भक्ति के स्थान पर राजभक्ति को ही अधिक पसन्द करते थे। सरदार किशनसिंह को यह पसन्द न था। इस लिये आपने भगतसिंह को लाहौर के डी० ए० वी० स्कूल में भर्ती कराया। यह छोटी सी जान पड़ने वाली घटना; उस ज़माने में एक धर्मनिष्ठ सिख के लिये एक बहुतबड़ी बात थी। सरदार भगतसिंह ने यहां से मेट्रिक्यूलेशन परीक्षा पास की। असहयोग आन्दोलन छिड़ा, भगतसिंह ने डी० ए० वी० छोड़ दिया और लाला लाजपतराय द्वारा खोले गये नेशनल कालेज में भर्ती होने गये। कालेज के प्रोफ़ेसर भाई परमानन्द जी ने आपकी परीक्षा ली, और योग्यता को देखकर इन्हें एफ० ए० श्रेणी में भरती किये जाने की सिफ़ारिश की। अतएव आप एफ० ए० में पढ़ने लगे। जहां आज ब्रेडला हाल है नेशनल कालेज पहले इसी स्थान पर था।

कालेज में आपकी सुखदेव और यशपाल से घनिष्ट मित्रता

हो गई। यद्यपि आपने द्वितीय भाषा के रूप में संस्कृत को लिया था। पर अंग्रेजी और जनरल नालेज की ओर आप विशेष ध्यान देते थे। कालेज की डिबेटिंग सोसायटी में भगतसिंह के भाषण देने की योग्यता की धाक थी। अर्थ शास्त्र, राजनीति और इतिहास का बड़े ही मनोयोग से आपने अध्ययन शुरू किया। स्वर्गीय-लाला लाजपतराय जी द्वारा संस्थापित "सर्वेन्टस् आफ दी पीपुल्स सोसायटी" की "द्वारकादास लायब्रेरी" इनको आवश्यक पुस्तकें दे कर बहुत ही उदारता से सहायता करती थी। शहीद श्री सुखदेव और बेनामो निशां हस्ती मिटा देने वाले शहीद, श्री भगवतीचरण के साथ भगतसिंह अध्ययन करते थे। यह तीनों गहरे दोस्त थे। इन सब की अध्ययन शीलता की गवाही नेशनल कालेज के प्रोफेसर श्री छबीलदास जी और द्वारकादास लायब्रेरी के उस समय के लायब्रेरियन और आज कल के कानपूर के प्रसिद्ध मजदूर नेता श्री राजाराम शास्त्री एम० एल० ए० दे सकते हैं।

सरदार भगतसिंह, राजनीति के एक बड़े अध्ययनशील विद्यार्थी थे। पर वे केवल किताबी कीड़े बनकर न रहे। देशके जो भी राजनैतिक आन्दोलन चलते थे उसमें वे सक्रिय दिलचस्पी लेते थे। उन्होंने कई प्रांतो का भ्रमण किया, विद्यार्थी जीवन में ही कानपूर कांग्रेस आये। क्रांतिकारी संस्थाओं से सम्बन्ध स्थापित किया। बाढ़ पीड़तों के लिये कार्य किया इस प्रकार वे क्रियाशील विद्यर्थी थे राजनीति के।

भगतसिंह को नाटयकला और संगीत से बड़ी दिलचस्पी थी।

आप खुद भी बहुत अच्छा गाते थे तथा वीर रस के आप सफल अभिनेता थे। एक दफ़े एक ऐतिहासिक पंजाबी ड्रामे में लालसिंह का पार्ट आपने बड़ी ही खूबी से अदा किया था।

देश सेवा की ओर

असहयोग आन्दोलन ने भगतसिंह को देश सेवा की ओर आकर्षित किया। उसकी असफलता ने लक्ष्य के प्रति अविश्वास उत्पन्न नहीं किया। वरन उन्हें नये साधनों की खोज में प्रवृत्त कर दिया। अभी उम्र के १५ वर्ष भी न हुये थे कि आपने पंजाब की गुप्त क्रांतिकारी संस्था में बड़े ही जोशो खरोश और लगन के साथ भाग लेना शुरू कर दिया। पंजाब में इसी समय "बबर-अकाली" नामक एक बड़ा ही साहसी और आत्मोत्सर्गी दल देश सेवा की भावना से संगठित हुवा था। इस दल के लोग देश की स्वाधीनता हिंसात्मक उपायों द्वारा प्राप्त करने का प्रचार, और संगठन करते थे, हमें उनके मार्ग से मतभेद हो सकता है। हम उन के कार्य को देश हित के लिये अहितकर भी कह सकते हैं। पर उन में ऐसे लोग भी अवश्य थे जिनमें सच्ची लगन, ज्वलन्त देश-भक्ति, और मां के चरणों पर सर्वस्व निछावर कर देने की उत्कट अभिलाषा थी। जो त्यागी थे, सच्चे और महानत्यागी थे। सन् १९१४-१५ के प्रथम लाहौर षड्यंत्र में सिक्खों ने जो अपूर्व आत्म बलिदान किया था देश के नवयुवकों पर उसका भी प्रभाव पड़ा था। और मार्शल्ला की बेइज्जती, तथा जलियांवाले बाग़ के निहत्थों की तड़पती लाशें भी उसके दिलों में शोले फूंक रही थीं।

भगतसिंह के पिता सरदार किशनसिंह जी ने १९१४-१५ में क्रांतिकारी संस्थाओं को बराबर सक्रिय सहयोग दिया था। पंजाब के मशहूर गवर्नर सर माइकेल ओडायर ने अपनी पुस्तक 'इन्डिया-ऐज़ आई नो इट' में इस बातका उल्लेख करते हुये यहां तक कहा है कि इन्हों ने हज़ारों रुपये इस अन्दोलन में अपने पास से लगाये थे। परिणाम हुवा 'डिफेन्स आफ़ इन्डिया ऐक्ट' में सरदार किशनसिंह जी की नज़रबन्दी। ऐसी दशा में भगतसिंह का इस दिशामें क़दम बढ़ाना कोई आश्चर्य की बात न थी।

अभी सरदार भगतसिंह कालेज में ही पढ़ रहे थे कि घर वाले इनकी शादी का प्रबन्ध करने लगे। पंजाब केशरी रणजीतसिंह के वंशजों की एक कन्या से विवाह भी तय होगया,यही नहीं रस्म अदायगी का दिन भी निश्चित हो गया। भगतसिंह विवाह नहीं करना चाहते थे। पर दिल न दुखे इस ख़याल से बाबा के पूछने पर ये उस विषय में चुप्पी साध लेते थे मगर अपने पिता किशनसिंह जी को इन्होंने यह बात बहुत ही साफ ढंग से बताकर शादी करने से इनकार कर दिया था। किसी ने इनकी एक न सुनी, अकस्मात एक दिन घर वालों ने देखा भगतसिंह ग़ायब हैं, सरदार किशनसिंह को लाहौर में एक पत्र, भगतसिंह का मिला जिसमें उन्होंने शादी के कारण अपना घर छोड़ना बताया था।

कानपुर में

भगतसिंह लाहौर से चलकर कानपुर पहुँचे, देश भक्त नवयुवकों के लिए प्रताप प्रेस अपना घर सा रहा है, अमर शहीद गणेशशंकर जी विद्यार्थी के पास जो पहुंचता उसे यही अनुभव ोता कि विद्यार्थी जी सबसे अधिक मुझे विश्वास करते हैं और ेरे नजदीक हैं। भगतसिंह ने विद्यार्थी जी से भेंट की, अनजान युवक ने देश सेवा करने का अपना दृढ़ निश्चय प्रकट किया, और जीवन निर्वाह के लिए कुछ काम चाहा। सहायता या दान लेने से साफ इनकार कर दिया। विद्यार्थीजी ने युवक में, प्रतिभा, आत्म विश्वास और एक अजीब धुन देखी, उन्होंने उसे प्रेस में काम दिया, प्रताप प्रेस में भगतसिंह ने अपना परिचय दिया था 'बलवन्त' के नाम से।

कानपुर उन दिनों उत्तरी भारत के क्रान्तिकारी आन्दोलन के सूत्र संचालन का केन्द्र था। अनुशीलन समिति के एक प्रमुख संगठन कर्त्ता के रूप में श्री योगेश चटर्जी "राय महाशय" के नाम से संगठन कर रहे थे। यू० पी० प्रान्त में श्री० शचीन्द्रनाथ जी सान्याल ने भी अपना संगठन शुरू करदिया था। तथा कुछ अन्य लोग भी स्थान २ पर अपने छोटे २ गुट्ट बनाने लगे थे। पर कुछ दिनों बाद सब लोग "भारतीय प्रजातन्त्र संघ" एच० आर० ए० नाम की संस्था के नीचे एकत्र होकर काम करने लगे। राय महाशय कानपुर के कुरसवां में एक मकान लेकर

रहने लगे, भगतसिंह इन्हीं दिनों कानपुर आए। यहां उनका सम्बन्ध इसी क्रांतिकारी संस्था से हो गया। यह समय भगतसिंह के जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है। कारण इसी समय से आप भारत की एक सुसंगठित क्रांतिकारी संस्था के सदस्य बने और आपका जीवन बना, भारतीय क्राँति के इतिहास का एक अध्याय।

प्रताप में आप स्थायी रूप से नियुक्त नहीं हुए। आवश्यकता के अनुसार आपको खर्च मिल जाता था, पर यह रक़म किसी भी दशा में २०) माहवारी से अधिक नहीं पहुंची। प्रताप की आर्थिक दशा स्वयं ही खराब थी। सरकार उसे मिट्टी में मिला देना चाहती थी। तीनबार उस की जमानत ज़प्त की जा चुकी थी। रायबरेली में हत्याकाण्ड करने वाले वीरपाल की मुख़ालफत करने और किसानों का पक्ष लेने के कारण मानहानि का मुकदमा चला। स्वर्गीय विद्यार्थी जी को हज़ारों रुपये जनता से लेकर मुक-दमें में फूंकना पड़ा। जेल भुगतनी पड़ी। दशा यहां तक बिगड़ गई थी कि डाक्टरों ने स्वयं विद्यार्थी जी को स्वास्थ्य ख़राब हो जाने की वजह से पहाड़ पर जाने की सलाह दी थी, पर धन की कमी के कारण वे पहाड़ पर न जाकर फूलबाग़ में बैठकर अपना काम करते थे।

कानपुर में भगतसिंह का परिचय वहाँ के अन्य सदस्यों से हुआ—जिसमें श्री बटुकेश्वर दत्त का नाम विशेष उल्लेखनीय है। दोनों में खूब गहरी छनने लगी। १६२४में गंगाजी में भयानक

भरी गंगा में जीवन की पर्वाह न कर इन दोनों ने अपने अन्य साथियों के साथ नजदीक गांव में रहने वाले किसानों को बचाने और उन्हें सहायता पहुँचाने का काम किया। इधर एक राष्ट्रीय स्कूल में हेडमास्टर की आवश्यकता हुई, स्वर्गीय विद्यार्थी जी ने इन्हें वहां नियुक्त करके भिजवा दिया। सरदार किशनसिंह इन्हें ढूंढ़ रहे थे उन्हें पता लगा कि भगतसिंह कानपुर में हैं, वे इन्हें ले जाने को आने वाले थे कि भगतसिंह की माता बीमार पड़ गईं, खबर पाकरभगतसिंह लाहौर लौट गये।

अकाली आन्दोलन

इन दिनों पंजाब में गुरुद्वारों का सुधार करने के लिए अकाली जोरों से आन्दोलन कर रहे थे। गुरू के बाग़ में सत्या-ग्रह चल रहा था, देश और विदेश से अकालियों के जत्थे केजत्थे गुरू के बाग़ को जारहे थे। ऐसा ही एक जत्था भगतसिंह के गांव बंगा से होकर गुजरने वाला था। गांव पर जत्थे का शानदार स्वागत होना आवश्यक था। उसके भोजन और ठहरने का प्रबंध भी होना ही चाहिए था। जत्थे में १०० से ऊपर आदमी थे। इतना बड़ा प्रबन्ध गांव के अन्दर कर लेना कोई आसान बात न थी। सरदार किशनसिंह लाहौर में थे, उन्होंने भगतसिंह को इसका प्रबन्ध करने को लिखा। जोश के साथ भगतसिंह काम में जुट पड़े। गांव के कुछ प्रभावशाली "टोडी" सिख, विरोध करने लगे। आपने उनकी रत्ती भर भी परवाह न की। खुद गांव के दरवाजे

दरवाजे जाकर आटा, दाल, घी, लकड़ी आदि सामान मांग २ कर इकट्ठा किया और जत्थे के आगमन पर उसका शानदार स्वागत करके शहीदी-सिपाहियों को भोजन कराया, और १०१) रुपये की थैली भेंट की। इसी के साथ २ एक दीवान भी किया गया। धार्मिक कीर्तन के बाद भगतसिंह बोलने खड़े हुए। आपने भारतीय आज़ादी के आन्दोलन के इतिहास को बताते हुए हर प्रकार के सुधारों को पूर्ण रूप से होने के लिए भारत का विदेशी शासन से मुक्त होना निहायत ज़रूरी बताया। इसी सिलसिले में कलकत्ते में, गोपीमोहन शाहा द्वारा की गई हत्या की उन्होंने बड़े ही जोरदार शब्दों में प्रशंसा की, यद्यपि सर चार्ल्स टेगर्ट के स्थान पर निरपराध अर्नेस्ट डे के मरने पर शोक प्रकट किया।

इसके बाद भगतसिंह पर पुलिस की निगाह कड़ी होगई। उनके भाषणों की बराबर रिपोर्ट ली जाने लगी। कुछ दिनों बाद आप लाहौर चले आये, और बाद में बेलगांव कांग्रेस देखने चल दिये।

बेलगांव कांग्रेस से लौट कर कानपुर होते हुए भविष्य का कार्यक्रम निश्चित करके १९२५ के प्रारम्भ में सरदार भगतसिंह पंजाब में अपने गांव पहुँचे। सरदार किशनसिंह जी ने इन्हें स्थाई काम में लगाने की ग़रज़ से लाहौर के पास नक्कानकोट नामक जगह, जहां इनकी अपनी ज़मीन जायदाद भी है, एक डेरी फार्म खुलवा दिया। डेरी खुलने से पहले पंजाब पहुँच कर सरदार भगतसिंह ने कुछ दिनों तक उर्दू के "अकाली" अखबार

के सम्पादकीय विभाग में काम किया, और बाद में पंजाब के प्रसिद्ध साम्यवादी उर्दू अखबार "कीर्ति" का बलवन्तसिंह के नाम से सम्पादन किया। डेरी खुल जाने पर आप उसमें चले आये।

लाहौर में डेरी के दूध की खूब मांग हुई। डेरी जोरों से चल निकली। काम में भगतसिंह ने भी दिलचस्पी ली। नौकर के साथ सब काम, सफ़ाई, धुलाई, चारा-पानी, कुट्टा काटना खुद वे भी करने लगे। पर साथ में पढ़ना और गुप्त समिति का संगठन मजबूत करना बराबर जारी था। कलम और गडांसा एक ही साथ, और एक सी खूबी से काम कर रहे थे। डेरी भी चल रही थी और लेख लिख कर समाचार पत्रों द्वारा प्रचार भी होरहा था।

यह जमाना शुरू सन१९२६ का है। युक्त प्रान्त में काकोरी षड्यन्त्र का मुकद्दमा चलने लगा था। 'हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसियेशन" के बहुत से प्रमुख कार्यकर्ता इसमें फंसकर सीखचों के अन्दर पहुँच गये थे। और कुछ लोग पुलिस को अंगूठा दिखा कर, उसकी छाती पर मूंग दलते हुए, संस्था का संगठन करते घूम रहे थे। सरदार भगतसिंह श्री सुखदेव के साथ कानपुर आये। यहां श्री विजयकुमार सिनहा तथा अन्य अपने पुराने साथियों से मिल कर उन्होंने संस्था को फिर से सुचारु रूप से संगठित करने का निश्चय किया।

युक्तप्रान्त-पंजाब और बिहार तीनों को ठीक ढंग से संगठित करने का भार सर्व श्री विजयकुमार सिनहा और सरदार भगतसिंह पर पड़ा।

यह जमाना घोर निराशा का जमाना था। देश के सामने कोई कार्यक्रम नथा, हिन्दू-मुसलमान टुकड़ों के लिये आपस में लड़ रहे थे। नेता लोग अंधेरे में टटोल रहे थे। ऐसे निराशामय वातावरण में यह गुमनाम, साधनहीन नौजवानों की टुकड़ी मजबूत संगठन का जाल बिनने में लगी थी।

पंजाब का विद्यार्थी समाज देश की समस्या को उस समय एक दम उपेक्षा की दृष्टि से देख रहा था। उसमें भयानक उदासीनता छाई हुई थी। राष्ट्रीयता के लिये यह समाज निरा मरु-भूमि सा जान पड़ता था। ऐसे समय श्री सुखदेव इस मरु भूमि को राष्ट्रीयता का नन्दन कानन बनाने के प्रयत्न में जी जान से जुटो पड़े थे। काम, पत्थर से सर टकराना था। पर समय आने पर देश ने देखा, इन धुनी मतवाले नौजवानों ने पंजाब के विद्यार्थियों में एक जीवन फूंक दिया, उनमें आग पैदा करदी।

भगतसिंह और सुखदेव एक दूसरे के घनिष्ट मित्र थे, परस्पर प्रतिकूल प्रकृति के होते हुए भी एक दूसरे के पूरक थे। इन दोनों के प्रयत्नों का फल था, पंजाब का मजबूत संगठन।

यह लोग अपने काम में जुटे ही थे कि एक आकस्मिक घटना ने काम में रोड़े अटका दिये।

अक्टूबर सन् १९२६ लाहौर में दशहरे का मेला शुरू होचुका था, एक दिन रामलीला के मेले में किसी ने एक बम फेंक दिया। पंजाब की पुलिस ने अपने अजीबो ग़रीब तर्क से यह साबित किया कि यह काम क्रांतिकारी दल ने किया

है। अब उन्हें ऐसे एक नौजवान की जरूरत थी जिसे क्रांतिकारी साबित किया जा सके। और जो इस घटना के दिन लाहौर में मौजूद रहा हो। पुलिस का यह मतलब डेरी में काम करने वाले सरदार भगतसिंह को फांसने से बहुत अच्छी तरह सिद्ध होरहा था।

एक दिन भगतसिंह पकड़ कर बोरस्टल जेल लाहौर की एकान्त कोठरी में बांध दिये गये। कई दिनों तक न तो वे किसी मजिस्ट्रेट के सामने ही पेश किए गये, और न उन्हें यही बताया गया कि वे किस जुर्म में गिरफ्तार किये गए हैं। दो साल बाद इसी जेल में उन्होंने अपने मित्रों के साथ, राजनैतिक कैदियों के साथ किए जाने वाले दुर्व्यवहार के विरोध में अनशन किया था जिसमें श्री यतीन्द्रनाथदास शहीद होगये।

जब उन्हें अपने ऊपर लगाये गये जुर्म की खबर हुई, तो वे ताज्जुब में आ गये। क्रान्तिकारी कामों के लिए गिरफ्तार किये जाने के लिए तो वे हथेली पर सर लेकर हो घूम रहे थे। पर निरपराध मनुष्यों की हत्या के जुर्म में कभी उन्हें गिरफ्तार होना पड़ेगा, इसे उन्होंने कभी स्वप्न में भी न सोचा था।

लम्बे अर्से तक यह मुकद्दमा चला। दौरान मुकदमे में सरदार भगतसिंह ६० हजार की लम्बी जमानत पर रिहा किये गये। अन्त में जमानत भी खतम हुई और पुलीस ने मुकदमा भी वापस ले लिया।

इस मुकदमे के दौरान में, जब जमानत पर छूटे हुए थे तो वे, गुप्त दल के काम में भाग नहीं ले सकते थे । कारण ऐसा करना जमानत करने वाले के प्रति विश्वासघात था। उन्होंने इस समय का उपयोग सार्वजनिक कार्यों में किया। उन्होंने नौजवान भारत सभा की नींव डाली और प्रान्त भर में उसका मजबूत संगठन किया। नौजवान भारत सभा के संगठन सम्बधी उनके विचार अध्ययन करने योग्य हैं। गुलामी और दरिद्रता की संसार व्यापी समस्या पर विचार करके वे इस नतीजे पर पहुंचे थे कि भारत की पूर्ण स्वाधीनता केवल राजनैतिक ही नहीं वरन आर्थिक और सामाजिक भी होनी चाहिये। मौजूदा शासन प्रणाली आर्थिक शोषण को कायम रखने की गरज से बनाई गई है, और आज की समाज व्यवस्था भी शोषण प्रथा को कायम रखने के लिए ही प्रयत्न शील है। हमें आमूल क्रान्ति करनी पड़ेगी। और ऐसी क्रांति केवल मुट्ठी भर संगठित मनुष्यों से नहीं की जा सकती। मुट्ठी भर मनुष्यों द्वारा होने वाला परिवर्तन, शासन प्रणाली की प्रथा का परिवर्तन न होकर, संचालन करने वाले व्यक्तियों का परिवर्तन होता है। हमें तो इस सम्पूर्ण प्रथा को निर्मूल करके एक नवीन प्रथा को रचना है, जिसमें आम जनता का शोषण एक दम असम्भव हो, जिसमें उत्पत्ति के तमाम साधन व्यक्ति के लाभार्थ न होकर समाज के फायदे के लिए हों। वस्तुओं का उत्पादन मुनाफा उठाने के लिए न होकर देश की आम जनता की आवश्यकता पूर्ति के लिये हो, और देश की

आवश्यकता ठीक से संकलित की गई हो, आज की तरह अव्य-वस्थित न हो।

इन तमाम बातों को पूरा करने के लिए आम जनता में जागृति और अधिकारों के प्राप्त करने की चेतना उत्पन्न करने की आवश्यकता है। और यह सब शोषित वर्ग–किसान–मजदूर तथा भावुक नवयुवकों में घुस कर, उनके साथ काम करके पैदा की जा सकती है। आज की क्रांति हमारी सर्वांगीण क्रांति होनी चाहिए, और उसमें आम जनता को भाग लेना होगा। हमें आम जनता को अपने इस नए आदर्श से परिचित कराना होगा। इसलिए हमें आम जनता में प्रचार करना होगा, और यह प्रचार खुले आन्दोलन द्वारा काफी सरलता से और प्रभाव पूर्ण ढंग से किया जा सकता है।

साथ ही ठीक, समय पर, ठीक ढंगसे काम संचालन करने के लिए यह भी जरूरी है कि एक मजबूत, संगठित अनुशासन को पूरी तरह से मानने वाली और आत्मोत्सर्ग कर देने वाली सुदृढ़ पार्टी की आवश्यकता है। जो आज के शोषितवर्ग के उत्थान के लिये, उसके हाथों में शासन सूत्र लादने के लिए, भयानक से भयानक साहस करने के लिए तय्यार रहे अतएव गुप्त समिति एवं खुले संगठन का होना निहायत जरूरी है।

एक बात और, क्रांति के समय आम जनता का ठीक से संचा-लित होना क्रांति की सफलता के लिए निहायत जरूरी होता है। आम जनता अपने बीच के काम करने वालों से ही अधिक प्रभावित

होती है चाहे वे किसी भी विचार धारा के मानने वाले क्यों न हों! और यदि हमने अपने लोगों को जनता के सामने लाकर पहले ही से खड़ा न कर दिया, जो कि अपने कामों द्वारा उसका विश्वास अपने ऊपर हासिल कर लें, तो ऐन मौके पर उस आम जनता का स्वार्थियों के हाथों में खेल जाने का भीषण खतरा रहता है। इन्हीं तमाम विचारों को ध्यान में रख कर नौजवान भारत सभा का जन्म दिया गया था। उसका कार्य-क्रम कम्यूनिस्टिक ढंग का था। मजदूरों और किसानों का संगठन करना उसका मुख्य उद्देश्य था। और इसके लिए नवयुवकों को संगठित करके, उनको अपने वर्ग के स्वार्थों से तिलांजली दिला कर, शोषित-वर्ग में अपने अस्तित्व को एकाकार करके, कार्य करने के लिए तैयार करने का प्रबन्ध कियो गया था।

क्रान्ति के माने—इन्क़लाब के माने—किसी पुरानी टूटी-फूटी, या सड़ी गली चीज को मरम्मत करना नहीं है। बल्कि उस रद्दी चीज का ध्वंस करके उसके स्थान पर ऐसी एक नई चीज का निर्माण करना है जो अधिक सुन्दर, अधिक उपयोगी, और अधिक टिकाऊ हो।

आज का समाज श्रेणी स्वार्थों पर खड़ा है। सुविधा प्राप्त वर्ग—अपनी सुविधायें—मानवता, न्याय और दया की पुकार से नहीं छोड़ सकता। उसे तो उनको छोड़ने के लिये बाध्य करना होगा। और यह बाध्य करना, हाथ उठा कर वोट देने या सभाओं में प्रस्ताव पास करने से नहीं किया जा सकता। जहां

कहीं भी ऐसे प्रयत्न हुए हैं वे सदैव असफल ही सिद्ध हुए हैं। मत के द्वारा शासन सूत्र जब आप के अधिकार में आते हैं, यदि आप अपने आदर्श के प्रति सच्चे, हैं तो आपको शासन चलाने वाली मशीन के छोटे बड़े सब पुर्जों को एकदम निकाल कर फेंक देना पड़ेगा। और उनके स्थान पर आप का काम ठीक और इमानदारी से करने वाले पुर्जे लगाने पड़ेंगे। अन्यथा पुरानी मशीन के पुर्जे जो स्वभावतया ही, आपके हित विरोधी हैं आप के कामों में रोड़े अटकावेंगे, और आप को प्रतिपल असफल बनाने की चेष्टा करेंगे। जिससे आप का लक्ष्य प्राप्त करना नामुमकिन हो जावेगा। और यदि आपने ऐसा करने की कोशिश जो कि केवल मशीनके पुर्जोंको ही हटाना नहींहै बल्कि वे पुर्जेजिस वर्ग के हितोंकी रक्षा करते हैं उसके अस्तित्व के लिये भी गंभीर और वास्तविक खतरा पैदा कर देना है, तब यह दोनों गुट्ट एक होकर, प्राणों की बाजी लगाकर, अपनी रक्षा को आगे बढ़ते हैं, उस प्रयत्न में उन्हें चाहे जिस हर्बे से काम लेना पड़े। इस प्रकार संघर्ष आप के सर पर आ नाचता है· और अगर आपने अपने आपको सब तरह से मजबूत, संगठित और तैयार न रक्खा तो विजय की आशा व्यर्थ की चीज के सिवा और क्या सिद्ध होगी? इतना ही नहीं हमारी इस प्रकार की काहिली, और लापरवाही, देश द्रोहिता और शोषित मानव समाज के प्रति किये गये विश्वासघात के सिवा कोई दूसरी चीज न कही जा सकेगी।

भारत सभा इन सब विचारों का प्रतिनिधित्व

थी। सरदार भगतसिंह ने जी तोड़ परिश्रम करके पंजाब प्रांत में इसका संगठन मजबूत बनाया। परिणाम स्वरूप भगतसिंह का प्रभाव पंजाब के नौजवानों और आम जनता पर बढ़ गया। स्वाभाविक ही है कि इससे उस समय के राजनीति के प्रांतीय गद्दीधर और महन्तों को धक्का लगे। उन्हें अपनी जायदाद छिनती नजर आयी। उस समय अपने आपको पुराना क्रांतिकारी और बड़ा देशभक्त कहने वाले एक महानुभाव जो आज अपने आपको शिक्षा और इतिहास का 'कुछ' समझते हैं। सरदार भगतसिंह के खिलाफ दूषित वातावरण पैदा करने में प्रयत्नशील हुये, और इसमें अखिल भारतीय ख्याति के किसी समय के उग्रवादी नेताओं में से किसी एक ने भी सहयोग दिया। भगतसिंह को "खुफिया पुलिस का आदमी" प्रचार किया जाने लगा, और कहा गया कि वह पंजाब के नौजवानों को गलत रास्ते पर ले जाकर मिटा देने के लिये काम कर रहा है। इतिहास आज गवाही दे रहा है, कौन क्या था? और कौन क्या है?

काकोरी षड़यंत्र में चार युवकों को फांसी दी गई थी। भगतसिंह ने ठीक एक वर्ष बाद "काकोरी दिवस" मनाने का निश्चय नौजवान भारत सभा द्वारा किया। इस प्रदर्शन और उसके प्रचार द्वारा वे अपने आदर्शों का प्रचार करना चाहते थे, अतएव उन्होंने १९१५-१६ में लाहौर षड़यंत्र में जिन नवयुवकों ने अपना आत्म-बलिदान किया था उनके चित्र खोजकर कर निकाले और उनके

स्लाइड बनवाये, तथा इन स्लाइडों का प्रदर्शन करके सचित्र व्याख्यान का प्रबन्ध किया।

सरदार भगतसिंह तो खुद जमानत पर थे, इस लिये यह काम श्रीभगवतीचरणजी पर पड़ा, इस कार्यमें उन्हें काफी सफलता मिली। पहलीही बार जब लाहौर ब्रे डलाहाल में मेजिकलालटेन द्वारा यह भाषण दिया गया तो, हाल में तिल धरने की जगह न थी। भगवतीचरण जी फोटोमें दिखाए गए शहीद का जीवन चरित्र, उसकी कार्य-प्रणाली: उसका आदर्श और आज की आवश्यकता, बड़े ही ज्वलन्त, मार्मिक और दिल के तारों को छूने वाले शब्दों में कहते थे। लाहौर के नौजवान बेचैन हो उठे, इस बढ़ते हुए प्रभाव को देख कर पंजाब सरकार ने निषेधाज्ञा निकाल कर यह भाषण बन्द करा दिए।

यह वही भगवती चरण थे,जो लाखों की सम्पत्ति की गोद में पले थे। जो एक अद्वितीय मेधाशाली व्यक्ति थे। जो सेनापति चन्द्रशेखर आजाद के दाहिने हाथ, उनके प्रधान सलाहकार थे। जिन्होंने अपनी लाखों की सम्पत्ति'भारतीय प्रजातंत्र संघ' के कामों की पूर्ति के लिए फूंक दी। जिनका अपना जीवन भी इसी काम के लिए एकान्त में चुप चाप समाप्त हो गया रावी के किनारे। उस बम का निरीक्षण करते समय, जो लाया जाने वाले था, सरदार भगतसिंह को जेल से छुड़ा कर ले जाने के काम में। जिन्होंने बम विस्फोट से घायल हो जाने के बाद, पेट से निकली हुई अपनी तमाम आंतों को अपने हाथों अन्दर रखकर पट्टी बांध लेने के

बाद अपने पास खड़े हुए जीवन सहयोगी से मुस्करा कर-आह ! वह मर्मान्तक मुस्कराहट-कहा था, 'घबड़ाने की बात नहीं, सहारा दीजिये, मैं चलता हूं'। जिनकी लाश बग़ैर किसी धूम धाम के, बग़ैर किसी के आंसू बहे, बग़ैर किसी के फूल चढ़ाए-एक चरवाहे से मंगाये गए फड़ुये से खोदकर बनाई गई, नदी के किनारे की समाधि में रख दी गई थी। जिन्होंने मरते समय भी याद की थी, मातृ-भूमि की, एक भी शब्द न कहा, अपनी कार्य संगिनी, जीवन संगिनी, प्रिय पत्नी दुर्गादेवी बोहरा या अपने हृदय के एक मात्र रत्न, एक मात्र पुत्र शचीन्द्रनाथ बोहरा के बारे में।

जिनकी धर्म पत्नी एक प्रमुख अभियुक्ता थी देहली षड्यन्त्र केसकी, जिनकी पत्नीका प्रमुख हाथ बताया जाता था लेमिग्टनरोड गोली कांड में। जिनकी पत्नी प्रसिद्ध थीं क्रांतिकारियों में "भाभी" के नाम से। वे "भाभी" जिन्होंने भगतसिंह को जेल से छुड़ाने के प्रयत्न को सफल बनाने के लिए अपने तीन हज़ार के जेवर उतार कर दे दिये थे।

नौजवान भारत सभा द्वारा आयोजित "काकोरी दिवस" पंजाब प्रांत तथा अन्य स्थानों में बड़े ही शान के साथ मनाया गया। पंजाब के युवकों के लिए "नौजवान भारत सभा" अपना एक खास अंग और राष्ट्रीय संस्था बन गई। फलस्वरूप कांग्रेस की भी शक्ति बढ़ी। नौजवान उसके कामों में भाग लेने लगे।

डेरी का काम चलरहा था पर इन तमाम कामोंका प्रबन्ध करने के कारण भगतसिंह को अक्सर डेरीसे गायब रहना पड़ने लगा।

व्यापार में कुछ धक्का लगा। भगतसिंह की यह लापरवाही सरदार किशनसिंह को खटकी। वे भगतसिंह पर बिगड़े, लानत मलामत की, यहां तक कि गुस्से में आकर एक छड़ी भी मार दी। घटना के कुछ दिनों बाद ही डेरी कार्य की भी इति श्री हो गई।

इसके बाद सरदार भगतसिंह ने शाहन्शाह चक नामक स्थान में रहना शुरू किया। इस दरमियान में वे कभी कभी लाहौर भी आते थे। बीच में हफ्तों नहीं, महीनों वे ला पता रहते। सरदार किशनसिंह के किसी दोस्त ने इसी बीच में उनसे कहा कि अगर आप भगतसिंह को मुझे सौंप दें, तो मैं आपको एक हजार रुपया महीना दिया करूंगा। सरदार किशनसिंह ने इस बात को मंजूर कर लिया। भगतसिंह उन सज्जन के पास नौकरी करने के लिये भेजे गए। पर वे वहां न पहुँचे। ग़ायब हो गए। जिसका जीवन किसी महान आयोजन और अनुष्ठान में लगा हो, वह संकुचित सीमा में कैसे रह सकता था ?

भारतीय क्राँतिकारी आँदोलन

भारत ने गुलामी के जुये के फेंक देने की बराबर कोशिश की है। १८५७ के असफल प्रयास को विद्रोह के नाम से भले ही पुकारा जाय। पर वह एक प्रयास था इसमें सन्देह करने का कोई स्थान नहींहै। उसके बाद इधर उधर छोटे मोटे प्रयत्न होतेही रहे। १९१४ तक भारत के अनेक प्रांतों, खास कर बंगाल में अनेक गुप्त संस्थायें कार्य कर रही थीं। योरप में महायुद्ध छिड़ा, इन संस्थाओं ने अपने लक्ष्य पूर्ति के लिए प्रयत्नशील होने का अच्छा सुयोग

पाया। भारत में सशस्त्र क्रांति के झन्डे को ऊंचा करने की तैयारियां होने लगी। प्रसिद्ध क्रांतिकारी सर्व श्री रासबिहारी बोस, यतीन्द्रनाथ मुकर्जी, अवनी मुकर्जी, शचीन्द्रनाथ सान्याल, वी० जी० पिंगले, सरदार करतारसिंह, ठाकुर पृथ्वीसिंह, बाबा सोहनसिंह, सरदार गुरमुखसिंह, सरदार पृथ्वीसिंह, प्रतूल गांगूली, भूपेन्द्रदत्त आदि नेता सिख और राजपूत पल्टनों को अपनी ओर मिलाकर तथा विदेशी शक्तियों से सहायता प्राप्त करके हिंदोस्तान में क्रांति कराने की तैयारी में जुट पड़े। पर आपसी विश्वासघात ने सब बीच में ही चौपट कर दिया। केवल सिंगापुर में कुछ किया गया। पर ब्रिटेन के साथी, साम्राज्यवादी जापान ने अपनी फौजों से उसे कुचल दिया। भारत में ब्रिटिश साम्राज्यवाद शंकित हो उठा। उसकी आंखों में खून चमकने लगा। उन भारतीय सेनाओं के—जिन पर क्रांतिकारियों से मिल जाने का सन्देह था—हथियार रखवा लिए गए और अंग्रेजी फौज का कड़ा पहरा बैठा दिया गया। तथा बाद में वह क्रांति के मोर्चे पर भेज दी गई। सैकड़ों सिपाही और सरदार कोर्टमार्शल करके गोली से उड़ा दिये गए। इधर देश में, डिफेन्स ऑफ इन्डिया एक्ट की घोषणा कर दी गई, और पंजाब बंगाल तथा युक्त प्रान्त में लगभग ७ हजार आदमी इस काले कानून के शिकार बना कर आजादी से वंचित कर दिए गए। कोई जेल में और कोई किसी दूरस्थ निर्जन गांव में नजरबन्द कर दिया गया।

युद्ध समाप्त हुवा। देश में एक ओर रौलट एक्ट बनाया जा

रहा था और दूसरी ओर मांटेगू-चेम्सफोर्ड सुधार-स्वराज्य की पहली क़िश्त दी जा रही थी। भीषण असन्तोष की ज्वाला मुल्क में भड़क उठी। स्थान२पर सभायें हुईं और जलूस निकले। देश की राजनीति में इस समय एक नई शक्ति ने पदार्पण किया। महात्मा गांधी ने कांग्रेस में अहिंसा के द्वारा स्वराज्य लेने का मार्ग बताया। खिलाफ़त का मसला हल कराने और राजनैतिक स्वतंत्रता हासिल करने के लिए असहयोग आंदोलन छिड़ा। तथा यू०पी० के गांव, चौरो चौरा में पुलिस किसान संघर्ष हो जाने केफलस्वरूप, सारे देश का आंदोलन महात्मा गांधीकी आज्ञानुसार स्थगित होगया। इस धक्केसे देश विक्षुब्ध होउठा। लोगोंका मन फिर पुराने तरीके की ओर गया। सन् १९२४ तक देश में फिर कई गुप्त संस्थायें कायम हो गईं। पुराने क्रांतिकारी नेताओं ने देश में संगठन को मजबूत बनाने का प्रयासआरम्भ कर दिया। पर बंगाल में १९२५ में बंगाल आर्डिनेन्सका वार हुआ। इधर युक्त प्रांत में, श्री रामप्रसाद बिस्मिल, श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल, और योगेश-चन्द्र चटर्जी आदि क्रांतिकारियों के प्रयत्नों से प्रांत के छोटे २ अनेकों दलों को मिला कर एक बृहत और सुसंगठित दल 'हिन्दो-स्तान रिपब्लिकन एसोसियेशन' के नाम से कायम हुआ। पंजाब से सरदार भगतसिंह जब कानपुर आये, तब उनका सम्बन्ध इसी दल से हो गया और उनका पार्टी नाम "बलवन्त" रखा गया। वे बहुधा इसी नाम से पत्रों में लेख लिखते थे, और कीर्ति पत्रिका कासम्पादन भी इसी नाम से किया। श्री योगेश चटर्जी यू०पी० में

"राय महाशय" के नाम से परिचित थे। कानपुर में सरदार भगत-सिंह इन्हीं के तत्वावधान में काम करते थे।

६ अगस्त १६२५ को काकोरी की प्रसिद्ध ट्रेन डकैती हुई। 'हिन्दोस्तान रिपब्लिकन एसोसियेशन' दल के सदस्यों ने इस दिन शाम को लखनऊ से कुछ मील, दूर काकोरी स्टेशन के पास पेसिंजर ट्रेन को रोक कर उसमें जाने वाली रेल की आमदनी का खजाना लूट लिया। पुलिस के प्रयत्न और किसी सदस्य के विश्वासघात से इस कार्य का भेद पुलिस को मिला। २६ सितम्बर १६२५ के सवेरे, सारे यू०पी०प्राँत में तलाशियां और गिरफ्तारियों की धूम मच गई। सी० पी०, बिहार, बंगाल, पंजाब, महाराष्ट्र तक से लोग गिरफ्तार किये गए। केस चला और अनेक बातों का रहस्योद्घाटन हुआ।

जिस समय लखनऊमें यह मुकद्मा चल रहा था, सरदार भगतसिंह कई बार लखनऊ गये। अदालत में जाकर मुकद्मा देखा। जिला जेल में जाकर अभियुक्तों से मुलाकात की। अन्दर से भगतसिंह को आज्ञा मिली कि वे कुछ लोगों के जेल से फरार होने का प्रबन्ध करें। बाहर और अन्दर तेजी से काम प्रारम्भ हो गया। पर आकस्मिक बाधाओं के कारण यह प्रयास सफल न हो सका। इसके बारे में प्रबन्ध करते समय दोबार भगतसिंह गिरफ्तार होने से बाल २ बचे।

इस असफलता के बाद संस्था का संगठन ठीक करने के लिये वे दूसरी ओर प्रयत्नशील हुये। इस काम में उन्हें सेना-

प्रभाव

सन १९२६ के अन्त में सरदार भगतसिंह के विचार क्या थे, उन पर देश के क्रांतिकारी आन्दोलन का क्या प्रभाव पड़ा था, पंजाब के बब्बर अकाली आन्दोलन से वे कितने प्रभावित थे, और १९२१ के असहयोग आन्दोलन की असफलता ने उनके हृदय पर कैसी चोट पहुंचाई थी, इसका कुछ आभास "एक पंजाबी युवक" के नाम से लिखे हुए उनके एक लेख से, जो १५ मार्च १९२६ के साप्ताहिक प्रताप में "होली के दिन रक्त के छींटे" नामक शीर्षक से प्रकाशित हुआ था, हमें मिलता है। लेख हम नीचे देते हैं:—

(प्रताप १५ मार्च १९२६)

होली के दिन रक्त के छींटे

बबर अकाली फाँसी पर

होली के दिन—२७ फरवरी १९२६ के दिन, जब हम लोग खेल कूद में व्यस्त हो रहे थे, उसी समय इस विशाल प्रदेश के एक कोने में एक भीषण काण्ड किया जा रहा था। सुनोगे तो सिहर उठोगे! कांप उठोगे!!! लाहौर सेन्ट्रल जेल में ठीक उसी दिन ६ बबर अकाली वीर फांसी पर लटका दिये गये। श्रीकिशन सिंह जी गडगज, श्री सन्तासिंह जी, श्री दिलीपसिंह जी, श्री नन्दसिंह जी, श्री करमसिंह जी, और श्री धर्मसिंह जी, लगभग दो वर्ष से अपने इसी अभियोग में जो उपेक्षा, जो लापरवाही

दिखा रहे थे उसी से जाना जा सकता था कि वे इस दिन की प्रतीक्षा कितने चाव से करते थे। महीनों बाद जज महोदय ने फैसला सुनाया। ५ को फांसी, बहुतों को कालापानी अथवा देश निकाला और लम्बी २ कैदें। अभियुक्त वीर गर्ज उठे। उन्होंने आकाश को अपने जयघोषों से गुञ्जायमान कर दिया। अपील हुई। पांच की जगह छै मृत्यु दण्ड के भागी बने। उस दिन समाचार पढ़ा कि दया के लिये अपील भेजी गई है, पंजाब सचिव ने घोषणा की कि अभी फांसी नहीं दी जायगी।

प्रतीक्षा थी, परन्तु एकाएक क्या देखते हैं कि होली के दिन शोक ग्रस्त लोगों का एक छोटा समूह उन वीरों के मृतशवों को श्मशान मे लिये जा रहा है। चुपचाप उनकी अन्त्येष्टि क्रिया समाप्त होगई।

नगर में वही धूम था। आने जाने वालों पर उसी प्रकार रंग डाला जा रहा था। कैसी भीषण उपेक्षा थी? यदि वे पथभ्रष्ट थे तो होने दो, उन्मत्त थे तो होने दो। वे निर्भीक देशभक्त तो थे। उन्होंने जो कुछ किया था इस अभागे देश के ही लिये तो किया था। वे अन्याय न सहन कर सके, देश की पतित अवस्था को न देख सके, निर्बलों पर ढाये जाने वाले अत्याचार उनके लिये असह्य हो उठे, आम जनता का शोषण वह बर्दाश्त न कर सके, उन्होंने ललकारा और कूद पड़े कर्म क्षेत्र में। वे सजीव थे, वे सहृदय थे। कर्मक्षेत्र की भीषणते! धन्य है तू!! मृत्यु के पश्चात मित्र शत्रु सब समान हो जाते हैं, यह आदर्श है वीर पुरुषों

का। अगर उन्होंने कोई घृणित कार्य किया भी हो, तो भी स्वदेश के चरणों में जिस साहस और तत्परता से उन्होंने अपने प्राण चढ़ा दिए, उसे देखते हुए तो उनकी पूजा की जानी चाहिए थी। श्री टेगार्ट महोदय विपक्षी दल के होने पर भी, जतीन मुकुर्जी— बंगाल के वीर क्रांतिकारी की मृत्यु पर शोक प्रकट करते हुए, उनकी वीरता, देश प्रेम और कर्म शीलता की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा कर सकते हैं, परन्तु हम, कायर नर पशु, एक क्षणके लिये भी आनन्द—विलास छोड़ वीरों की मृत्य पर आह तक भरने का साहस नहीं करते। कितनी निराशाजनक बात है। उन ग़रीबों का जो अपराध—नौकरशाही की दृष्टि में—था, उसका उन्होंने पर्याप्त दण्ड—क्रूर नौकरशाही की भी दृष्टि में— पालिया। इस भीषण दुखान्त नाटक का एक और पर्व समाप्त होगया। अभी यवनिका पतन नहीं हुआ है। नाटक अभी कुछ दिन और भीषण दृश्य दिखायेगा। कथा लम्बी है। सुनने के लिए ज़रा दूर तक पीछे मुड़ना होगा।

असहयोग आन्दोलन पूरे यौवन पर था। पंजाब किसी से पीछे नहीं रहा। पंजाब में सिक्ख भी उठे, बड़ी गहरी नींद से उठे, और उठे खूब जोरों के साथ। अकाली आंदोलन शुरू हुआ। बलिदानों की लड़ी लग गई। मास्टर मोतीसिंह खालसा मिडिल स्कूल माहलपुर जिला होशियारपुर के भूतपूर्व हेड मास्टर महोदय ने एक व्याख्यान दिया। उनका वारन्ट निकला। परन्तु सम्राट का आतिथ्य उन्हें स्वीकार न था। यों ही जेलों में चले

जाने के वे विरोधी थे। उनके व्याख्यान फिर भी होते रहे। कोट फतूहीनामक ग्राम में भारी दीवान हुआ, पुलिस ने चारों ओर से घेरा डाला, फिर भी मास्टर मोतासिंह ने व्याख्यान दिया और अन्त में प्रधान की आज्ञा से सभी दर्शक उठ गए। मास्टर भी न जाने किधर पहुंचे। बहुत दिनों तक इसी तरह यह आंख मिचौनी का खेल होता रहा, सरकार बौखला उठी, अन्त में एक हमजोली ने धोखा दिया और डेढ़ वर्ष बाद एक दिन मास्टर साहब पकड़ लिए गए। यह पहला दृश्य था उस भयानक नाटक का!

गुरु का बाग़ आन्दोलन शुरू हुआ। निहत्थे वीरों पर जिस समय भाड़े के टट्टू टूट पड़ते, उन्हें मार मार कर अधमरा सा कर देते, देखने सुनने वालों में से कौन होगा जो द्रवित न हो उठा हो ! चारों ओर गिरफ्तारियों की धूम थी। सरदार किशन सिंह जी गड़गज्ज के नाम भी वारन्ट निकला। मगर वे भी तो उसी दल के थे। उन्होंने भी गिरफ्तार होना स्वीकार नहीं किया। पुलिस हाथ धोकर पीछे पड़ गई पर फिर भी वे बचते ही रहे। उनका संगठित किया हुआ अपना एक क्रांतिकारी दल था। निहत्थों पर किये जाने वाले अत्याचार को वे सहन न कर सके। इस शांतिपर्ण आंदोलन के साथ साथ उन्होंने शस्त्रों का प्रयोग भी जरूरी समझा।

एक ओर कुत्ते—शिकारी कुत्ते—उनको खोज निकालने के लिये सूंघते फिरते थे। दूसरी ओर निश्चय हुआ कि खुशामदियों

(झोली चुक्कों) कासुधार कियाजाय। सरदार किशनसिंहजी कहते थे । 'अपनी रक्षा के लिये हमें सशस्त्र जरूर रहना चाहिए, पर अभी कोई और क़दम न उठाना चाहिए।' परन्तु बहुमत दूसरी ओर था। अन्त में फ़ैसला हुआ कि तीन व्यक्ति अपने नाम घोषित करदें और सारी ज़िम्मेदारी अपने ऊपर ले लें तथा झोली चुक्कों का सुधार शुरू करदें। श्री कर्मसिंह, श्री धन्नासिंह, तथा श्री उदयसिंह जी आगे बढ़े। यह उचित था अथवा अनुचित, इसे एक ओर हटाकर ज़रा उस समय की कल्पना तो कीजिये जब इन नवीन वीरों ने शपथ ली थीः—

'हम देश सेवा में अपना सर्वस्व न्योछावर कर देंगे, हम प्रतिज्ञा करते हैं कि लड़ते लड़ते मर जांयगे मगर जेल जाना मंजूर न करेंगे।'

जिन्होंने अपने परिवार का मोह त्याग दिया था वे लोग जब ऐसी शपथ ले रहे थे उस समय कैसा सुन्दर, मनोरम, पवित्रता से परिपूरित, दृश्य रहा होगा। आत्मत्याग की पराकाष्ठा कहां है? साहस और निर्भीकता की सीमा किस ओर है? आदर्श परायणता की चरमता का निवास किधर है?

श्यामचुरासी—होशियारपुर ब्रान्च रेलवे लाइन के एक स्टेशन के निकट सबसे पहले एल सूबेदार पर हाथ साफ किया गया। उसके बाद इन तीनों व्यक्तियों ने अपने नाम भी घोषित कर दिये। सरकार ने पूरी ताक़त लगा कर इन्हें पकड़ने की कोशिश की, मगर सफलता न मिली। हड़की कलां में सरदार

किशनसिंह गड़गज्ज फिर गए। उनके साथ एक और युवक भी था जो वहीं घायल होकर पकड़ा गया। परन्तु किशनसिंह वहां से भी अपने शस्त्रों की सहायता से बच निकले। रास्ते में उन्हें एक साधू मिला। उसने उन्हें बताया कि उसके पास एक ऐसी बूटी है कि जिसकी सहायता से मन चाहा काम आसानी से किया जा सकता है। भ्रम में फंस कर एक दिन वे अपने शस्त्र रख-कर इसी साधू के पास गये। कुछ दवाई रगड़ने को देकर साधू बूटी लेने गया और पुलिस को ले आया। सरदार साहब पकड़ लिये गए। वह साधू सी० आई० डी० विभाग का सब इन्स्पेक्टर था। बबर अकाली वीरों ने अपना काम खूब जोरों के साथ शुरू कर दिया। कितने ही सरकार के सहायक मार डाले गये। दोआबा व्यास और सतलज के बीच में, जालन्धर और होशि-यारपुर का जिला पहले हीसे भारत के राजनैतिक मानचित्र में प्रसिद्ध है। १९१५ के शहीदों में भी अधिकतर इन्ही जिलों के लोग थे। अब फिर वहीं पर धूम मची। पुलिस विभाग ने सारी शक्ति खर्च करदी परन्तु कुछ न बन पड़ा।

जालन्धर से कुछ दूर एक बिल्कुल छोटी सी नदी है। उसके किनारे एक गांव में 'चौंता साहब' नामक गुरु द्वारा है। उसमें श्री कर्मसिंह जी, श्री धन्नासिंह जी, श्री उदयसिंह जी तथा श्री अनूपसिंह जी दो एक और व्यक्तियों के साथ बैठे थे, चाय बनाने की तय्यारियां हो रही थीं। बैठे बैठे श्री० धन्नासिंह जी ने कहा, 'बाबा कर्मसिंह जी! हमें यहां से अभी इसी वक्त चल

देना चाहिए। मुझे किसी बुरी घटना के घटित होने का भा आभास हो रहा है। ७५ वर्ष के बूढ़े श्री कर्मसिंह जी ने इस बात पर तनिक भी ध्यान नहीं दिया, पर श्री० धन्नासिंह अपने साथ १८ वर्षीय श्री दिलीपसिंह को साथ लेकर चले ही गए। बैठे २ बाबा कर्मसिंह जी ने श्री अनूपसिंह जी की ओर बड़े गौर से देखकर कहा—'अनूपसिंह तुम अच्छे आदमी नहीं हो' मगर इसके बाद उन्होंने खुद भी इस बात पर ध्यान नहीं दिया। बातें अभी हो ही रही थीं कि सचमुच ही पुलिस आ धमकी। सारे बम श्री अनूपसिंह के क़ब्जे में थे। ये सब लोग उठ कर गांवों में छिप गये। पुलिस ने लाख सिर मारा पर विफल रही। अन्त में पुलिस की ओर से एक घोषणा की गई। बागियों को निकालो वर्ना गांव में आग लगा दी जायगी। पर गांव वाले विचलित नहीं हुए।

अवस्था को देख वे सब खुद ही बाहर निकल पड़े। सारे बम अनूपसिंह ले भागा और जाकर आत्मसमर्पण कर दिया। शेष चार व्यक्ति वहीं पर घिरे हुए खड़े थे। पुलिस के अंग्रेज कप्तान ने कहा, कर्मसिंह ! हथियार छोड़ दो, तुम्हें माफ कर दिया जायगा। वीर ने ललकार कर जवाब दिया ! हम अपने देश के लिये सच्चे क्रान्तिकारी की तरह लड़ते लड़ते शहीद हो जांयगे पर हथियार नहीं डाल सकते। उन्होंने अपने तीनों साथियों को ललकारा। वे सिंह की तरह गर्ज उठे ! लड़ाई छिड़ गई। खूब दनादन गोलियां चलीं। गोली बारूद समाप्त

होने पर वे वीर पानी में कूद पड़े और घण्टों गोलियों की वर्षा होते रहने पर ये चारों वीर स्वर्गधाम सिधार गये।

श्री कर्मसिंह की आयु ७५ वर्ष की थी। व कैनाडा में रह चुके थे। उनका आचरण पवित्र और चरित्र आदर्श था। सरकार ने समझा, बबर अकाली खत्म हो गये, परन्तु वे उन्नति कर रहे थे। १८ वर्षीय दिलीपसिंह एक अत्यन्त सुन्दर, सुदृढ़ हृष्ट, पुष्ट पर अशिक्षित युवक थे। और उनका डाकुओं का साथ हो गया था। धन्नासिंह जी की शिक्षा ने उन्हें डाकू से एक सच्चा क्रांतिकारी बना दिया। उधर सरदार बन्तासिंह और वरियानसिंह आदि कई प्रसिद्ध डाकू डाकेजनी छोड़कर इनमें आ मिले।

इन सब में मृत्यु का डर नहीं था। वे अपने पिछले कुकर्मों को धो डालाना चाहते थे। उनकी संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही थी। एक दिन मानहाना नामक गांव में धन्नासिंह बैठे थे, पुलिस बुला ली गई। नशे में चूर धन्नासिंह बैठे ही पकड़ लिए गए। उनका भरा हुआ पिस्तौल छीन कर हाथों में हथकड़ी लगादी गई और उन्हें बाहर लाया गया। बारह साधारण सिपाही और दो अंग्रेज अफ़सर उनको घेर कर खड़े हो गये। ठीक उसी समय धमाके की आवाज हुई। धन्नासिंह जी ने बम चला दिया था। इससे वे स्वयं भी मरे और साथ ही एक अंग्रेज़ अफसर और दस सिपाही। बाक़ी के लोग बुरी तरह घायल हुए।

इसी तरह मुण्डेर नामक गांव में बैठे हुए बन्तासिंह'

ज्वालासिंह आदि कई लोग घिर गये । यह सब छत पर बैठे हुए थे । गोली चली, कुछ देर तक अच्छी झड़प होती रही पर पुलिस ने पम्प से मिट्टी का तेल छिड़क कर घर में आग लगा दी । फिर भी वरियानसिंह बच निकले परन्तु बन्तासिंह वहीं मारे गये ।

अगर इससे पहले की एक दो अन्य घटनाओं का वर्णन कर दिया जाय तो अनुचित न होगा । बन्तासिंह बड़े साहसी पुरुष थे । एक बार, शायद जालन्धर छावनी में जाकर रिसाले में पहरे पर खड़े हुए सिपाही की घोड़ी तथा राइफ़ल वे छीन लाये थे । इन दिनों जब कि पुलिस के दस्ते के दस्ते इनकी तलाश में मारे मारे फिरते थे, कहीं जंगल में किसी दस्ते से इनकी भेंट होगई । सरदार बन्तासिंह ने फौरन चुनौती दी—"अगर हिम्मत है तो दो दो हाथ कर लो" परन्तु उस ओर तो थे पैसे के ग़ुलाम और इस ओर आत्मोसर्ग के इच्छुक ! तुलना कैसे हो सकती है ? सिपाहियों का दस्ता चुपचाप चला गया ।

इन लोगों को पकड़ने के लिए ख़ास तौर से पुलिस नियुक्त की गई थी और उसकी थी यह दशा । ख़ैर ! गिरफ्तारियों की भरमार थी । गांव गांव में पुलिस की ताज़ीरी चौकियाँ बिठाई जाने लगीं । धीरे धीरे बबर अकालियों का ज़ोर कम होने लगा । अब तक तो मानों इन्हीं का राज्य था । जहां जाते, कुछ लोग हर्ष और चाव से, कुछ भय और त्रास से इनको ख़ूब आव-भगत करते । सरकार के सहायक एकदम त्रस्त हुए बैठे थे ।

सूर्योदय के पहले और सूर्योदय के बाद घर से निकलने का साहस ही उन्हें न होता था। ये उन दिनों के 'हीरो' समझे जाते थे, वे वीर थे और उनकी पूजा–वीर पूजा समझी जाती थी। परन्तु धीरे धीरे उनका जोर ख़त्म होगया। सैकड़ों पकड़े गये, मुक़द्मे शुरू हुए।

बरियानसिंह अकेले बचे थे। जालंधर, होशियारपुर में पुलिस का अधिक ज़ोर देख कर वे दूर लायलपुर में जारहे थे। वहां पर एक दिन बिल्कुल घिर गये, मगर ख़ूब शान के साथ लड़ते हुए बच निकले। पर बहुत थक गये थे। कोई साथी भी न था। दशा बड़ी विचित्र थी। एक दिन ढिंसिया नामक गांव में अपने मामा के पास गये। शस्त्र बाहर रक्खे थे। शाम को भोजन करने के बाद अपने शस्त्रों के पास जा रहे थे कि पुलिस आ पहुँची। घिर गये। अंग्रेज नायक ने उन्हें पीछे से जा पकड़ा। उन्होंने कृपाण से ही उसे बुरी तरह घायल कर दिया। फिर वे नीचे गिर गये। हथकड़ी पहनाने की सारी चेष्टायें विफल हुईं। गोली से मार डाले गये। इस अवसर पर अंग्रेज अफ़सर भी बुरी तरह घायल हुआ था। यह घटना १६२४ के अन्त की है। दो वर्षों के पूर्ण दमन के पश्चात अकाली जत्थे का अन्त हुआ। उधर मुकद्मा चलने लगा। जिसका परिणाम ऊपर लिखा जा चुका है। अभी उस दिन इन लोगों ने शीघ्र फांसी पर चढ़ाये जाने की इच्छा प्रगट की थी। उनकी वह इच्छा पूरी होगई। वे शांत होगये।

इस लेख को लिखते समय सरदार भगतसिंह को यह ख्याल भी न गुज़रा होगा कि उनका क़दम भी इसी राह पर आगे बढ़ रहा है। और उन्होंने जिन पर आंसू बहाये, उनकी लाशें फांसी होने के बाद उनके कुटुम्बियों को दे दी गयीं, पर उनकी अपनी लाश यह भी सुविधा न प्राप्त कर सकेगी।

साम्यवादी नामकरण।

दशहरे पर चले हुए लाहौर बमकेस से पीछा छूटते ही सरदार भगतसिंह कमर कस कर क्रान्तिकारी दल के संगठन में जी जान से जुट पड़े। दल इस समय एक प्रकार से छिन्नभिन्न हो रहा था। अनेक प्रान्तों के भिन्न भिन्न ज़िलों में क्रांतिकारियों के अलग अलग २ छोटे छोटे गिरोह बन गए थे, जिनका आपस में एक प्रकार से कोई सम्बन्ध न था। भगतसिंह सेनापति आज़ाद और विजयकुमार सिन्हा के अथक परिश्रम से संस्था में फिर से नवजीवन संचार हुआ।

जुलाई १६२८ में कानपुर में इस दल की एक बैठक की गई। और निश्चय हुआ कि भारत के भिन्न २ प्रांतों के प्रमुख क्रान्तिकारियों की एक बैठक बुला कर एक अखिल भारतीय केन्द्रीय समिति की स्थापना की जाय। और उसी के द्वारा एक आदर्श तथा एक कार्यप्रणाली पर समस्त भारत में क्रान्तिकारी कार्यों का संचालन किया जाय। इस सब का प्रबन्ध करने का भार पड़ा काकोरी षड्यन्त्र में १० साल की सजा भुगतने वाले

श्री राजकुमार सिन्हा के छोटे भाई, संगठन कार्य में पटु, सुचतुर और वीर, श्रीयुत बिजयकुमार सिन्हा और सरदार भगतसिंह के कन्धों पर।

शान्ति और आराम कहां ? दोनों कर्मयोगी जुट पड़े काम में। दिन और रात रेल में सफर करते बीतने लगी। धन की कमी थी। संगठन अस्तव्यस्त था, साधन हीन अवस्था में भी, भूख प्यास की परवाह न कर अपनी लगन के धुनी, देश के दीवाने, उस समय के इन गुमनाम नौजवानों ने, देश के गली २ की ख़ाक छान कर तमाम बिखरे हुये तारों को एकत्रित किया। वीणा सुधरी और ऐसी तान निकली जिसने एक बार तो हिला दिया सारे भारत को।

सितम्बर सन १९२८ को उपरोक्त प्रयत्नों के फलस्वरूप, हिन्दुस्तान के भिन्न २ प्रान्तों से आये हुये क्रान्तिकारी दल के प्रतिनिधियों की एक बैठक, देहली के पुराने क़िले में प्रारम्भ हुई। दो दिन तक उसने अपना कार्य किया। इस बैठक में बिहार, यू० पी,० राजपूताना, और पंजाब प्रत्येक प्रान्त से दो दो प्रतिनिधि शामिल हुए थे।

सरदार भगतसिंह ने प्रस्ताव किया "हमारी संस्था हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसियेशन के नाम में हिन्दुस्तान और रिपब्लिकन इन दो शब्दों के बीच में 'सोशलिस्ट' शब्द और जोड़ दिया जाय। इससे जनता में हमारे आदर्श का स्पष्टीकरण होगा। स्वराज कैसा होगा, शासन सत्ता किसके हाथ में होगी, और

शासन प्रणाली किस वर्ग के हित रक्षा के लिए काम करेगी ? ऐसे महत्वपूर्ण प्रश्नोंका स्पष्टीकरण संस्था के नाम में इस शब्द के जुड़ जाने से आपही हो जावेगा।

युक्तप्रान्त के प्रतिनिधियों ने इस संशोधन का ज़ोरदार विरोध किया। उनका कहना था, संस्था का नामकरण बहुत सोच समझ लेने के बाद देश के प्रसिद्ध क्रांतिकारी नेताओं ने किया है। इस नाम का काफी प्रचार हो चुका है। और उसके पीछे उसका अपना एक सक्रिय इतिहास है, ऐसी दशा में यह नाम परिवर्तन उचित और विशेष उपयोगी सिद्ध हो ऐसी आशा नहीं की जा सकती। विचार विनिमय और वादाविवाद के बाद सरदार भगतसिंह की बात मान ली गई। संस्था का नाम आज से "हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन असोसियेशन" हुआ।

इसी बैठक में केन्द्रीय समिति की स्थापना हुई। जिसमें युक्तप्रांत, पंजाब और बिहार के दो दो तथा राजपूताने के १ प्रतिनिधि भेजने का अधिकार दिया गया और राज-पूताने का प्रतिनिधित्व सुपुर्द किया गया श्री० कुन्दनलाल जी गुप्त के, जिनका नाम काकोरी षड़यन्त्र में आया था और जो उसमें फरार घोषित किये गये थे। काकोरी षड़यन्त्र में कुन्दनलाल जी "विद्यार्थी" के नाम से आये हैं।

मजबूत संगठन के लिये कार्य विभाजन होना निहायत जरूरी था। अतएव संस्था के सदस्य दो श्रेणी में बाँटे गये।

'सहायक' और 'कार्यकर्ता'। व्यक्तिगत तथा सार्वजनिक चन्दों से धन एकत्रित करना, कार्यकर्ता दल के सदस्यों के ठहरने का प्रबन्ध करना, तथा प्रचार कार्य और सहानुभूति रखने वाले लोगों के विषय में समाचार देना सहायक दल के सदस्यों का कार्य निश्चित हुआ। अस्त्र शस्त्र तथा शक्ति के साथ धन का संग्रह करना, फौजी कार्यों को कार्यरूप में परिणित करना तथा दल की कार्यवाही को सार्वजनिक कार्यवाही के रूप में उन्नत करने की चेष्टा करना कार्यकर्ता विभाग का कर्तव्य निश्चित हुआ, एवं इस विभाग का नाम रक्खा गया 'हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी'। इसके अध्यक्ष हुये अजेय सेनापति श्री चन्द्रशेखर आज़ाद—जो काकोरी षडयन्त्र को मिलाकर लगभग आधे दर्जन राजनैतिक मुक़दमों में फरार घोषित किये गये थे, जिनको पकड़ने के लिये केवल युक्तप्रान्त ही नहीं तमाम भारत के बड़े बड़े पुलिस अधिकारी स्थान २ पर गलियों की धूल चाटते घूमते थे। जिनके अस्तित्व से साम्राज्यवादी ब्रिटेन के गुर्गे दिन रात आशंकित रहते थे, पत्ते की तरह कांपते थे। जिन्होंने अपना प्राणोत्सर्ग किया, हँसते हँसते माता के चरणों पर, सत्ताइस फरवरी १९३१ को इलाहाबाद के अल्फ्रेड पार्क में दर्जनों पुलिस वालों द्वारा चारों ओर से घेर लिये जाने पर बहादुरी के साथ सामना करते करते

सेनापति के चरित्र पर प्रकाश डालने का न तो यह अवसर ही है और न स्थान ही। यह चीज तो स्वतंत्र रूप से ही पाठकों

के सामने रक्खी जायगी और उनके व्यक्तित्व का आभास पूरी तौर से उसीमें मिल सकेगा।

हां, तो दल के काम को ठीक से संचालित करने के लिये यह भी निश्चय हुआ कि सेना विभाग के सदस्य घरबार से सम्बंध त्याग कर अपनी सारी शक्ति और सारा समय दल के कामों में लगावें, और अपने आपको हर प्रकार के साम्प्रदायिक तथा धार्मिक झंझट और चिन्हों से पाक रक्खें। परिणामस्वरूप सरदार भगतसिंह के केश और दाढ़ी एक दिन साफ हो गये।

काम की सुविधा और पुलिस की नज़रों से बचने के लिये दल का हेड क्वार्टर झांसी से हटाकर आगरे लाया गया। अनेकों दिलजले नवयुवकों ने घरबार त्यागकर यहीं पर अपना अड्डा जमाया। पैसे की कमी थी। देश के नौ निहालों को कभी कभी तो तीन तीन दिन तक भोजन की जगह एक प्याली चाय पर बिताना पड़ा। माह और पूस के जाड़े आठ या नौ नवयुवकों ने धोती का बिस्तरा और दो या तीन रद्दी कम्मलों से बिताया। जो लोग घर पर रह कर आराम का जीवन बिता सकते थे वे आज़ादी के दिवाने बन तलवार की राह पर चलने को निकल आये थे।

अध्ययन का शौक़ सरदार भगतसिंह के दिल में इस दशा में भी बहुत काफ़ी था। आगरे में भी वे किताबों का संग्रह करने लगे। इधर उधर जाकर और संस्था से सहानुभूति रखने वालों के पास जाकर, उन्होंने थोड़े से समय में ही बहुत सी पुस्तकें एकत्रित

कर लीं और एक छोटा सा पुस्तकालय तैयार हो गया इसमें अर्थ शास्त्र और राजनीति को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया था। यह लोग यहां पर खूब अध्ययन किया करते थे। सरदार भगतसिंह का अध्ययन, संस्था के किसी भी सदस्य से कम विस्तृत या गम्भीर नहीं था। अध्ययन करते समय वे सुन्दर और हृदयग्राहिणी उक्तियों को याद कर लिया करते थे। लाहौर षड़यन्त्र केस के समय जेल में उन्होंने इन उक्तियों द्वारा अपने साथियों का काफ़ी मनोरंजन किया।
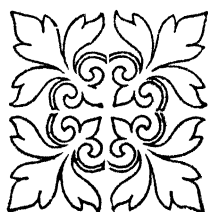
लाठी के बदले गोली

सारे भारत के एक स्वर से विरोध करने पर भी साम्राज्यवादी ब्रिटेन द्वारा नियुक्त, सात सयानों का सायमन कमीशन, ३ फरवरी १६२८ को "रावलपिन्डी" जहाज़ द्वारा भारत की छाती पर, बम्बई में आ धमका। मान्टेगू-चेम्सफोर्ड रिफ़ार्म स्कीम में किये गये वादे के अनुसार स्वराज्य की दूसरी क़िस्त में भारत को क्या दिया जावे और कैसे दिया जावे इसकी रूपरेखा तैयार करने के लिये इस कमीशन के सरसब्ज़ क़दम हिन्दोस्तान आये थे।

उस दिन सारे हिन्दोस्तान में हड़ताल थी। सारे देश ने सक्रिय रूप से अपने विरोध का विराट प्रदर्शन किया था। हड़ताल की सफलता देख सरकारी अधिकारी चंचल हो उठे। कई जगहों पर तो उनका पारा फ़्रीज़िंग प्वाइन्ट से भी ऊंचे पहुँच गया। शान्त प्रदर्शकों पर क्रूरता से लाठी बरसाई गई। अनेकों नागरिकों के सर से ख़ून के फ़व्वारे चलने लगे। पर आन्दोलन दबने के बजाय भीषणता से बढ़ने लगा। मानी हुई बात है आज़ादी की चाह-लाठी, गोली, फाँसी या जेल के हरबों से संसार में न तो कहीं और कभी आज तक दबाई जा सकी है, और न आगे ही कभी दबाई जा सकेगी। जहां कहीं या जब कभी इनका प्रयोग किया गया है ये सदैव ही नाकामयाब सिद्ध हुए हैं। आज़ादी की लड़ाई कभी तेज़, कभी धीमी हो सकती है मगर मुल्क के ग़ुलाम रहते हुये वह कभी ख़तम नहीं हो सकती। उसका अन्त तो लक्ष्य को हासिल कर लेने—पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त कर

लेने पर ही सम्भव है ।

देश के जिस किसी भाग में भी साइमन कमीशन गया हड़-ताल, बहिष्कार, काले झण्डे और "सायमन लौट जावो" के नारों से उसका स्वागत किया गया ।

३० अक्टूबर १९२८ को सायमन कमीशन लाहौर आ रहा है। लाहौर के जिला मजिस्ट्रेट ने दफा १४४ की घोषणा करके शहर में जुलूस निकालने और जनता के स्टेशन जाने पर मनाई की पाबन्दी लगा दी। राष्ट्रीय आजादी के प्रयत्न में युवकों का केन्द्र लाहौर चुप रहे यह असम्भव था। २९ अक्टूबर १९२८ को लाहौर में एक विराट सार्वजनिक सभा हुई पचासों हजार की तादाद में जनता एकत्रित हुई। सभा में एक स्वर से निश्चय हुआ कि राष्ट्र का विरोध प्रकट करने केलिये लाहौर के नागरिकों का जुलूस सरकारी हुक्म की परवाह न कर के ३० अक्टूबर को स्टेशन जावे और पूरी शक्ति से अपना प्रदर्शन करे तथा शाम को सार्वजनिक सभा की जावे।

उस दिन, ३० अक्टूबर १९२८ को, लाहौर रेलवे स्टेशन कांटे दार तारों से घेर कर सुरक्षित कर लिया गया था। तार के घेरे की रक्षा के लिये थोड़ी २ दूर पर लम्बी लाठी से सुसज्जित पंजाब के पुलिस के जवान ऐंठते हुए खड़े थे। सारा लाहौर स्टेशन और उसके बाहर का स्थान पुलिस और कुछ फ़ौजी सिपाहियों से घिरा था। मालूम होता था कोई सशस्त्र शत्रु लाहौर स्टेशन पर हमला करने आ रहा है। थोड़ी देर के बाद देश के उस राष्ट्रीय झन्डे

को आगे फहराते हुए, जिस झंडे की मान रक्षा में भारतीय जवानों ने अनेकों बार अपना बलिदान दिया है—जुलूस स्टेशन के हाते में आया। जुलूस का नेतृत्व पंजाब केशरी लाला लाजपतराय कर रहे थे। कुछ देर शान्ति रही, एकाएक पुलिस दल में कुछ हलचल सी हुई और पल भर में ही कटीले तार के घेरे की रक्षा के लिए खड़े हुए पुलिसके नौजवान, अपनी लम्बी लाठियाँ ले निशस्त्र और शान्त जनता पर खूंख्वार भेड़िये की तरह टूट पड़े। कहे जाने वाले कई जिम्मेदार और उच्च अधिकारी भी अपने हाथों लाठियाँ बरसाने लगे। उन्होंने राष्ट्र की अमूल्य निधि लाला लाजपतराय जी के सीने पर बड़ी ही निर्दयता से प्रहार किये। वे चाहते थे जनता उत्तेजित हो उठे। नेताओं के प्रभाव से वे क़ाबू हो जाय। पर उन्हें निराश होना पड़ा। लाखों की भीड़ ने अपने सरताज, अपने प्रिय नेता को लाठियों से पिटते देखा पर शान्त खड़ी रही। उसने अहिंसा का व्रत ले रक्खा था। लाहौर के पुलिस सुपरिन्टे-न्डेन्ट मि० स्काट और असिस्टेन्ट सुपरिन्टेन्डेट मि० सान्डर्स अपनी असफलता पर खड़े हाथ मल रहे थे। पर हां! भारतीय जनता ने बौखलाई हुई नौकरशाही का देख लिया था नंगा रूप।

३१ अक्टूबर १९२८ को इसी नज्ज़ारे को यू० पी० के प्रमुख शहर लखनऊ में सरकारी अधिकारियों ने बड़ेही शान से जनता को फिर दिखाया। यहां विरोध प्रकट करने वाली जनता पर लाठियां बरसाई गई। घोड़े दौड़ाये गए। भारत के हृदय सम्राट पं० जवा-हर लाल नेहरू और माननीय नेता पं० गोविन्द वल्लभ पन्त

लाठियों से बुरी तरह कूटे गये। नौकरशाही की यह बौखलाहट, यह परेशानी—यह नादिरशाही देखकर जनता दंग थी।

१७ नवम्बर १६२८ का मनहूस प्रातःकाल था। देश की अमूल्य निधि, नर केशरी लाला लाजपतराय जी का आज प्रातःकाल ६॥ बजे देहावसान होगया। लाठी की चोट तो गहरी थी ही, पर उन्हें इस राष्ट्रीय अपमान ने बहुत ही व्यथित किया था, परेशान किया था, उनकी नीद उड़ गई थी, शान्ति खो गई थी। अन्तिम घड़ी तक वे विचलित और व्याकुल ही रहे। उनके वे अन्तिम शब्द देश के नवयुवक हृदय पर थपेड़े मारने लगे। उन्होंने कहा था—"और जब नौबत आ ही जाय, तो देश के नौजवान जो चाहें सो करें।"

लालाजी की मृत्यु से देश में शोक की काली घटा उमड़ पड़ी। अपने इतने बड़े नेता का, इस प्रकार लाखों जनता के सामने दिन दहाड़े, नौकरशाही के गुर्गों द्वारा लाठी से पीटकर मौत के मुंह में जबर्दस्ती ढकेल दिए जाने पर वह विचलित हो उठी। उसकी आंखों के सामने उसे अन्धकार नजर आने लगा। राष्ट्र का इतना बड़ा अपमान क्या ऐसे ही चुपचाप सहन कर लेना चाहिए? एक, केवल यही एक प्रश्न था, जो राष्ट्र के हृदय को उस समय मथ रहा था।

सारे देश में शोक सभाएं हुईं, मातमी जुलूस निकले, हड़ताल रही, शोक प्रस्ताव पास हुए। पर राष्ट्र का हृदय शांत न हुआ—उसमें ज्वाला जलती ही रही। राष्ट्रीय पत्र अग्रलेख लिख रहे थे।

उन्हें नवयुवक भारत के उत्तेजित हो जाने की शङ्का होने लगी।

स्वर्गीय देशबन्धु चितरञ्जनदास की धर्मपत्नी, माता बासन्ती देवी ने कहा—

"मैं जब यह सोचती हूं कि कमीने और हिंसक हाथों ने स्पर्श करने का साहस किया था एक ऐसे व्यक्ति के शरीर को, जो इतना वृद्ध, इतना आदरास्पद, और भारतभूमि की ३०करोड़ नर नारियों का इतना लाड़ला था—जब मैं यह सोचती हूं तब मैं आत्मापमान के भावों से उत्तेजित होकर कांपने लगती हूं। क्या देश का यौवन और मनुष्यत्व आज जीवित है ? क्या वह यौवन और मनुष्यत्व का भाव इस कुत्सित काण्ड की धधकती हुई लज्जा और ग्लानि को अनुभव करता है ? मैं, इस भारतभूमि की एक स्त्री मैं, इस प्रश्न का स्पष्ट उत्तर चाहती हूं। प्रथम इसके कि हमारे लाड़ले लाजपत की चिता भस्म ठण्ढी पड़े, भारत का मनुष्यत्व और युवक भाव आवे और इसका जवाब दे।"

देश का युवक भाव निर्जीव या निष्क्रिय न था। चिता की राख ठीक से ठण्ढी भी न होने पायी थी कि ठीक १७ दिसम्बर १६२८ की शाम को "भारत के मनुष्यत्व और युवक भाव ने, जैसा उसने उचित समझा, अपने ढंग का करारा उत्तर दिया,

लाहौर षड्यन्त्र में कही गयी कहानी के अनुसारः—

लाला लाजपतराय की मृत्यु के बाद से क्रान्तिकारी उन पुलिस अफ़सरों को जो लाला जी पर आक्रमण करने के जिम्मे-दार थे मार कर राष्ट्रीय अपमान का बदला लेना चाहते थे। वे

अपने इस काम से एक ओर अहिंसात्मक आन्दोलन की व्यर्थता सिद्ध करना चाहते थे, और दूसरी ओर यह साफ़ कर देना चाहते थे कि राष्ट्रीय अपमान कभी भी और किसी भी दशा में चुपचाप सहन न किया जावेगा।

इस काम को ठीक तौर से पूरा करने के लिये निश्चित हुआ कि सरदार भगतसिंह और राजगुरू लाठी चलाने वाले पुलिस अफ़सर पर आक्रमण करेंगे तथा सेनापति आज़ाद सारे काम का सञ्चालन और रक्षा करेंगे।

काम अधूरा न रह जावे इस ख्याल से यह भी निश्चय कर लिया गया था कि यदि उस अवसर पर पुलिस आ जावे तो प्राणों का मोह त्याग कर पुलिस का सामना किया जावे। उनके सामने बंगाल के प्रसिद्ध क्रांतिकारी नेता शहीद जितेन्द्र-नाथ मुकर्जी का उदाहरण था, जिसने पुलिस का सामना होने पर प्राण रहते अन्त तक डट कर मुक़ाबला किया था सन १९१६ में, जब कि पुलिस उन्हें गिरफ़्तार करके जेल में ठूंस देना चाहती थी। अपने इस कार्य से वे समझते थे भारतीय नौजवानों में चेतना का संचार होगा, वे क्रांतिकारी आन्दोलन की ओर आकर्षित होंगे।

निश्चयानुसार १५ दिसम्बर को सब लोग गये, पर उस दिन मालूम हुआ मि० स्काट आफ़िस नहीं आये हैं, इस लिये वे लौट आये।

१७ दिसम्बर १९२८ की शाम को सब लोग अपने २ निश्चित मोर्चे पर डटे हुये थे। ठीक ४॥ बजे मि० सांडर्स अपनी

मोटर साइकिल पर बाहर निकले, फ़ौरन ही किसी का रिवाल्वर तड़प उठा, मि० सान्डर्स घायल हो गये, मोटर साइकिल वेक़ाबू हो एक ओर जा गिरी और मि० सान्डर्स दूसरी ओर। सरदार भगतसिंह यहीं पर न रुके, उनकी उंगली हिली, तीन बार रिवाल्वर ने आग उगली। मि० सान्डर्स बुरी तरह घायल होगये थे, वे किसी तरह बच नहीं सकते थे, लोग दौड़ पड़े, सिपाही चाननसिंह ने पीछा किया, उसे लौट जाने के लिए कहा गया पर वह न माना, किसी का रिवाल्वर गर्ज उठा. वेचारा चाननसिंह निर्जीव हो जमीन पर लोटने लगा।

पुलिस आफ़िस में बैठेहुए लोग रिवाल्वर चलने की आवाजें सुन कर घड़ियां गिन रहे थे। बाहर निकलने का किसी ने साहस न किया, केवल एक पुलिस अफ़सर मि० फर्न पुलिस आफिस से बाहर उभके, मगर ज्यों ही रिवाल्वर की दो सनसनोती हुई गोलियां उनके सर पर से हवा को चीरती हुई निकल गईं, तो उन्होंने अपना वापस लौट जाना ही बुद्धिमानी का काम समझा और उसी का अनुसरण भी किया।

इसके बाद सब लोग फाटक से घुस कर हाते से होते हुये पुलिस आफ़िस से दस कदम के फ़ासले पर स्थित डी० ए० वी० कालेज के बोर्डिंग हाऊस पहुँचे। थोड़ी देर तक पुलिस के पीछा कर के आने की राह देखी गई, पर कोई न आया तब बाहर निकल कर सामने की साइकिल की दूकान से जबर्दस्ती साइकिलें लेकर सब लोग अपने २ रहने की जगह पर चल दिये।

घण्टे भर बाद सचेत और सतर्क पुलिस के कार्य पटु अफ़सर अपने दल बल सहित कालेज बोर्डिंग हाउस में आ धमके। उसे चारों तरफ़ से घेर लिया गया। आने जाने के सब रास्ते रोक दिए गये। कोने २ की तलाशी ली जाने लगी। इतना ही नहीं, लाहौर से बाहर जाने वाली सभी सड़कों पर पुलिस का कड़ा पहरा लगा दिया गया। स्टेशन पर पुलिस की सख्त निगरानी क़ायम करदी गई।

दूसरे दिन सबेरे शहर के भिन्न भिन्न भिन्न स्थानों पर, मकानों की दीवारों पर 'दि हिन्दोस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी' के नाम के लाल स्याही से मोटे हरफ़ों में छपे हुए पर्चे चिपके हुए थे जिनमें लिखा था 'सौन्डर्स मारा गया' 'लाला जी को बदला लिया गया' इत्यादि।

पुलिस इस काण्ड के करने वालों को खोज निकालने के लिए परेशान थी। खुफ़िया पुलिस के बड़े बड़े पुराने अनुभवी अफ़सर ज़मीन आसमान के क़ुलाबे एक कर रहे थे, लाहौर से बाहर जाने वाले सभी नौजवानों पर कड़ी नज़र रक्खी जाती थी। पर पुलिस के सारे प्रबन्ध निष्फल करके यह नौजवान लाहौर से बाहर हो ही गए।

सरदार भगतसिंह ने जो तरकीब इस्तेमाल की थी वह जितनी ही चतुरतापूर्ण थी उतनी ही साहसपूर्ण भी। एक बड़े सरकारी अफ़सर की तरह कपड़े पहन, उन्होंने अपना एक बड़ा सा नाम रख लिया और उसी नाम के लेबुल छपवा कर अपने ट्रंक और

पोर्टमेन्टों पर चिपका दिये। पुलिस की आँखों में धूल झोंकने के लिए एक सुन्दर युवती 'दीदी' श्रीमती सुशीलादेवी को भी साथ ले लिया और उसी लाहौर के सेन्ट्रल स्टेशन पर फ़र्स्ट क्लास कम्पार्टमेंट में रेल में सवार हुए, जहां ख़ास तौर से ख़ुफ़िया पुलिस वाले उनकी खोज के लिए नियुक्त थे।

श्री० राजगुरु हाथ में टिफ़िन केरियर लिए अर्दली के रूप में सरदार भगतसिंह के साथ ही थे। कहना अनावश्यक है कि रेल में सवार होते समय सबके हाथ ठीक जगह पर थे, उंगली भरेरिवाल्वर के घोड़े को छू रही थी। मौके के लिए सभी तय्यार थे। हमारी 'दीदी' भी तय्यार थीं।

कितने लोग जानते हैं दिल्ली षड़यन्त्र केस में प्रसिद्ध 'दीदी,' हमारी दीदी, श्रीमती सुशीलादेवी जो देहली की एक कन्या पाठशाला में प्रधानाध्यापिका के रूप में दिन रात भारतीय आज़ादी के लिए ज़बान पर चुप्पी की मोहर लगा कर काम करने वाली हमारी दीदी कर्मयोगी की एक साकार मूर्ति हैं।

सन् १९३० के आन्दोलन का ज़माना था। रोज़ाना कार्यकर्ता पकड़े जा रहे थे। भारत की ख़ुफ़िया पुलिस देहली षड़यन्त्र की फ़रार अभियुक्त। 'दीदी उर्फ़ सुशीला देवी' को पकड़ने के लिए ज़ोरों से प्रयत्नशील थी। कभी किसी शहर में किसी की तलाशी ली जाती थी तो कभी किसी वकील की मोटर मेरठ से आते हुए जमुना ब्रिज पर रोक कर टटोली जाती थी। ठीक इन्हीं दिनों, सरकार के एक उच्च अफ़सर, सिविलसार्जन

के घर में जन्म लेकर आशायश की गोद में लालित पालित होनेवाली, कालेज शिक्षा, तक शिक्षिता दीदी सुशीला, भिखारिणी के वेष में भारत की राजधानी खास देहली के छाती पर बैठी, धरना देने और जुलूस निकालने के लिए कांग्रेस स्वयं-सेविकाओं का संगठन कर रही थीं। पीछे रह कर काम करते जी उकता उठा, मां के चरणों पर बलिदान चढ़ाने, बलिवेदी का अर्घ्य बनने के लिए मन मचल पड़ा।

घन्टा घर से स्त्रियों का जुलूस निकला। हाथ में झंडा लिए श्रीमती सुशीला कप्तान के रूप में आगे थीं। शहर कोतवाल, सिटी मैजिस्ट्रेट, देहली सी० आई० डी० के अनेकों बड़े बड़े अफ़सर जुलूस को घेर कर चल रहे थे। देहली शहर की रौनक भरी सड़क चान्दनी चौक में जत्था गिरफ़्तार कर लिया गया। मेजिस्ट्रेट ने दीदी से नाम पूछा उन्होंने अपना एक नाम बता दिया। पिता का नाम पूछा गया। पिता का नाम ग़लत बताना दीदी को स्वीकार न था उन्होंने पिता का नाम या पता बताने से इनकार कर दिया। मेजिस्ट्रेट ने ३ माह की सख्त सजा और सी० क्लास दे दिया। जेल से बाहर सरकार के लाड़ले सी०आई० डी० अफ़सर सुशीला को पकड़ने के लिए दौड़ रहे थे, और दीदी सुशीला उन्हीं के सर पर देहली जेल में बैठे सत्याग्रही कप्तान का कर्तव्य निबाह रही थीं।

छूट जाने के बाद पुलिस को पता चला कि ग़लत नाम से सजा काट कर छूट जाने वाली स्त्री दीदी उर्फ़ सुशीलादेवी थीं। वह

खोज में व्यस्त हो गईं। इधर सरदार भगतसिंह के फाँसी के दिन लोग समझ रहे थे नजदीक आ रहे हैं। दीदी भगतसिंह से मिलने चल पड़ीं और प्रबन्ध करके उन्होंने जेल में सरदार भगतसिंह से भेंट की। कुछ काम था, जेल से एक पत्र दीदी के लिए भेजा गया। लाने वाले व्यक्ति के पास से वह पत्र न जाने कैसे सी०आई० डी० के हाथों पहुँच गया। पुलिस को मालूम हुआ कि दीदी लाहौर में हैं। बड़ी ज़ोरों से तैयारियां करके लाहौर पुलिस ने लगभग डेढ़ दर्जन मकान घेर लिये। कुछ ही क्षण पहले जिससे पत्र खो गया था उस व्यक्ति ने आकर पत्र खो जाने की खबर दी थी। दीदी सावधान होगईं, मकान छोड़ वे सड़क पर आ खड़ी हुईं। पुलिस मकानों की तलाशी ले रही थी और दीदी घूम घूम कर सब जगह का तमाशा देख रहीं थीं। पर इन सब बातों के बावजूद रात को ठहरने का कोई ठिकाना न था और शहर से बाहर जाने की सड़कें तथा रेलवे स्टेशन पर एक औरत की खोज में पुलीस की कड़ी निगाहें ताक रही थीं, ऐसी दशा में भी लाहौर से बाहर निकल जाना ही होगा यह था निश्चय हमारी दीदी का।

नव विवाहिता वधू वह भी देहाती वधू का वेष दीदी ने धारण किया। हाथों में लाख के जोड़े लम्बासा घूंघट, पैर में महावर से सजी, वे एक सज्जन के साथ आकर लाहौर सेन्ट्रल स्टेशन पर गाड़ी में सवार हुईं।

गाड़ी चलदी। कुछ स्टेशनों बाद एक स्टेशन पर गाड़ी रुकी मुंह खोले दीदी बाहर देख रही थीं। सरदार भगतसिंह के पिता सरदार किशनसिंह प्लेटफार्म पर टहल रहे थे। नज़र सुशीला पर पड़ी। दौड़ कर पहुँचे पूछा कहो बेटी ठीक तो है ? कहां चल रही हो ?

सरदार किशनसिंह भूल गये, सुशीला इस समय साधारण अवस्था में रेल में सफ़र नहीं कर रही है। अभी चन्द मिनटों पहले वह लाहौर पुलिस की आंखों में धूल झोंक कर बाहर निकल पाई है, और सरदार साहब के अपने पीछे कई आदमी सी० आई० डी० के लगे हुए साथ ही चल रहे हैं।

पर दीदी ने बड़ी ख़ूबी से परिस्थिति को संभाल लिया, बातों ही बातों में उन्होंने सरदार किशनसिंह को सब समझा दिया, सब मामला कुशलतापूर्वक निपट गया।

आज भी दीदी सुशीला, देहली में अनवरत परिश्रम कर रही हैं। कोई भी ऐसा सार्वजनिक काम नहीं जिसमें हमारी दीदी, देवी सुशीला का सहयोग न हो।

— —

दौड़-धूप

पुलिस वाले सरदार भगतसिंह को अच्छी तरह पहचानते थे। उनको शक हुवा कि वे अवश्य ही इस कान्ड में शामिल रहे होंगे। वे भगतसिंह को खोजने लगे, पर उनका कोई पता न था। पुलिस अधिकारियों ने जो गुप्त आज्ञायें जारी की थीं उनमें से एक यह भी थी, कि सरदार भगतसिंह जहां कहीं मिलें फ़ौरन गिरफ़्तार कर लिए जायें। उनका पता लगाने के लिए कई खास पुलिस अफ़सर तैनात हुए। उनको पहचानने वाले पुलिस कान्स्टेबुल रेलवे के बड़े बड़े स्टेशनों पर तैनात किए गए। सब ओर। इनके लिए कड़ी निगरानी शुरू हो गई। इतने पर भी सरदार भगतसिंह बे रोक-टोक अपना काम करते रहे। उनका दौरा जारी रहा।

लाहौर कांड के बाद जनता क्रांतिकारी दल की ओर विशेष रूप से आकर्षित हुई। विद्यार्थी लोग दल में शामिल होने को बढ़े। कांड करने के दिन इन लोगों के पास रहने वाले मकान में दिया जलाने को तेल ख़रीदने के लिये पैसे न थे। पहली रात को यह लोग भूख से व्याकुल थे। द्वारकादास लाइब्रेरी के एक अधिकारी और अपने मित्र के घर यह उधमी दल रात में पहुँचा। मित्र साहब खाना तैयार कर चुके थे, खाने की तैयारी में थे। इन लोगों को आया देख ठिठुके, यह लोग घुस पड़े देखा खाना तय्यार है, खाने को बैठ गये, खाते खाते सरदार भगतसिंह ने कहा "भाई आज थोड़ा सा घी खिला दो नहीं तो पछताओगे और कहोगे

बुरा किया मैंने नहीं खिलाया। हमारा, खिलाना तुम्हारी स्मृति की चीज़ बन कर रहेगा।"

मित्र ने कहा "रहने दो यह अपने सारे चकमें! तुम रोज़ ही कुछ ऐसा ही बका करते हो। खाना खा कर घर जावो।" सरदार भगतसिंह न माने, उठ कर गये आलमारी में घी की हांड़ी रक्खी थी उठा लाये और सब मिल कर खा गये।

यह दशा थी कांड होने से पहले रात तक की, बाद में हालत बदल गई। लोग सहायता के लिये धन देने लगे। अर्थाभाव दूर हो गया।

काकोरी के बाद दल का बंगाल से सीधा सम्बन्ध एक प्रकार से छिन्न भिन्नसा हो गया था। रही सही कड़ी देवघर षड्यन्त्र की गिरफ़्तारियों ने तोड़ दी थी। नया संगठन यू० पी०, सी० पी०, बिहार, पंजाब और थोड़ा बहुत बम्बई प्रेसीडेन्सी से सम्बन्धित था। निश्चय हुवा कि बंगाल से फिर से सम्बन्ध स्थापित किया जाय, और वहां की दशा का ठीक से अध्ययन किया जाय। इस की जिम्मेदारी दी गई श्री विजयकुमार सिनहा और सरदार भगतसिंह पर। कलकत्ता कांग्रेस होने जा रही थी, यही अवसर ठीक माना गया, यह लोग बंगाल चल दिये।

साधारण चेष्टा से ही यह लोग बंगाल प्रांतीय क्रांतिकारी दल के प्रमुख नेताओं से मिलने में सफल हुये। वे उन नेताओं की उत्कट देशभक्ती से बहुत प्रभावित हुए, पर देशकी स्वाधीनता क्रांति के द्वारा ही प्राप्त की जा सकेगी और क्रांति के अवसर पर शस्त्रों

का प्रयोग होना अवश्यम्भावी है, हिंसा ही उसका एक मात्र साधन है इस एक बात के सिवा वे कार्यक्रम में एक दूसरे से सहमत न हो सके।

बंगाल के क्रांतकारियों से बातचीत करने के पश्चात उन्हें बम बनाने की आवश्यकता महसूस हुई। कुछ दिनों की खोज के बाद उन्हें एक सज्जन मिले और उन्हों ने इस कार्य को प्रारम्भ कर दिया।

कलकत्ते से लौटते समय सरदार भगतसिंह श्री विजयकुमार सिनहा के साथ बिहार गये और वहां के संगठन को ठीक भाव से संचालित किया। कलकत्ते में बिहार का एक नया केन्द्र स्थापित कराया गया। एक सदस्य उसके अध्यक्ष नियुक्त हुये और फ़रार अभियुक्तों को आश्रय देने की सुविधा के लिये एक आश्रम भी खोला गया।

संस्था के प्रति व्यापारियों की सहानुभति प्राप्त हो जाने से बम बनाने के काम में आने वाले रसायनिक द्रव्य प्राप्त करने में कोई कठिनाई न पड़ती थो। इस काम को करने के लिये आगरे में एक मकान किराये पर लिया गया। बम-शिक्षक बुलाये गये। और उनके आ जाने पर काम शुरू किया गया। थोड़े ही अर्से में कुछ चुने हुये सदस्य इस काम में दक्ष हो गये। दो महीने तक यही काम होता रहा। आगरे के अलावा लाहौर और सहारनपूर में भी बम बनते थे। और उसके खोल ढलते थे कुली बाजार कानपूर को एक दूकान पर जिसमें दिन के वक्त ढाले जाते थे जूते ठोंकने के अड्डे और रात में ढलते थे बम के खोल। एक कारीगर

साहब को पार्टी से सहायता देकर इस दूकान में बैठाया गया, यह ढलाई का काम अच्छा जानते हैं, मेकेनिक दिमाग़ है पर सेनापति आज़ाद के देहावसान के बाद यह सज्जन कुछ कांप गए, आज कल कानपूर की कुछ खास बाज़ारों में इनके शुभ-शिव चरण इधर-उधर घूमते नज़र आते हैं।

आगरे में तय्यार किये दोनों बन फांसी लाकर उनकी जांच की गई। वे काफ़ी अच्छे साबित हुये। इनकी सफलता पर दल को काफ़ी खुशी हुई।

दल के एक सदस्य इस समय चेचक से बीमार पड़ गए, सरदार भगतसिंह और उनके साथियों ने रात दिन मेहनत करके उनकी सेवा सुश्रुषा की, वे अच्छे हो गये पर पकड़े जाने पर सरकारी गवाह बन कर अपने इन्हीं साथियों को फँसा कर—वे अपने आप इस ऋण से मुक्त हो गये।

बहरे कानो पर—

८ अप्रैल १९०९ को नई दिल्ली के असेम्बली भवन में एक अजीब घटना हुई। दिन के ग्यारह बजे असेम्बली के अध्यक्ष पटेल साहब के घंटी बजाते ही स्वराज्य पार्टी और सरकारी पक्ष के मेम्बर दो हिस्सों में बंट गये। गिनती होने के बाद अध्यक्ष ने घोषणा की कि ट्रेड डिस्प्यूट बिल पास। एकाएक विरोधी दल के सीटों के बीच एक जोरों का धड़ाका हुआ। लोग बम बमः चिल्लाने लगे। धुआँ मिटने भी न पाया था कि दूसरा धड़ाका हुआ। जहां बम गिरे थे पास के बेंच चूर २ हो गये। जमीन में एक गढ़ा सा होगया। पर किसी के चोट नहीं आई।

इस समय असेम्बली का दृष्य देखने योग्य था। अध्यक्षासन के पास बैठे हुए सर सायमन न जाने कहां गायब हो गये थे सम्मानित दर्शकों की गेलेरी में विराजने वाले सरदार पटेल, न मालूम कब, कहां और किस ओर निकल गये थे। असेम्बली के वीर मेम्बर लोग आस पास के कमरों की ओर भागे जा रहे थे मानों कोई भीषण खूंखवार जानवर उनका पीछा किये दौड़ा आरहा हो। कुछ लोग तो प्राण-भय से गुस्लखाने में भी घुस पड़े—सारा हाल और दर्शकों की गेलरी खाली पड़ी थी। बच रहे थे अपने स्थान पर अटल केवल दो महानुभाव, गांधी टोपी वाले त्यागमूर्ति पं० मोतीलाल जी नेहरू और महामना मालवीय जी। और हां! कुर्सियों के नीचे घुसे झांक रहे थे

उस समय के होम मेम्बर सर जेम्स क्रेरर, सेन्ट्रल गेट और महिलाओं की गेलरी के बीच स्थिर भाव से खड़े दो नौजवानों की ओर—उन दो ऐतिहासिक व्यक्तियों की ओर जिन्हें हम बाद में पुकारने लगे वीरवर बटुकेश्वर दत्त और सरदार भगतसिंह।

असेम्बली भवन का बम एक महत्वपूर्ण अवसर पर फेंका गया था। इस समय बम्बई में मजदूर आन्दोलन बहुत जोरों पर था। उसकी सफलता से सरकार भयभीत थी। इसी आंदोलन को कुचलने के लिए यह ट्रेड-डिस्प्यूट बिल गढ़ कर एसेम्बली में पेश किया गया था। शिमला अधिवेशन में अध्यक्ष पटेल ने अपने एक वोट से इस बिल को पास नहीं होने दिया। मगर कौन्सिल आफ़ स्टेट ने उसे फिर पुनर्विचार के लिए असेम्बली में भेजा और आज वह पास होगया। ठीक उसी समय में बम के धड़ाके हुये। पहला धड़ाका किया था सरदार भगतसिंह ने और दूसरे के सृष्टिकर्त्ता थे वीरवर बटुकेश्वर दत्त।

घटना के दिन असेम्बली भवन के दरवाजों पर पुलिस का कड़ा पहरा था, पर योरुपियन वेश-भूषा में सज्जित, एक जेब में बम और दूसरे में रिवाल्वर डाले यह नौजवान आज लगातार तीन दिन से यहाँ आते थे, और अवसर की प्रतीक्षा करते २ लौट जाते थे। आज अवसर हाथ आते ही उन्होंने अपना मन्सूबा पूरा किया मानो बम फेंकने और सलाई जलाने में कोई अन्तर ही न हो!

धड़ाके के बाद सुरक्षित रूप से निकल जाना इन युवकों के लिए कोई मुश्किल बात न थी। गैलरी और हाल तो सूना था ही, दरवाजे पर खड़े पुलिस कान्स्टेबुल और इन्सपेक्टर ड्यूटी छोड़ कर एक ओर खिसक गये थे। दोनों युवकों के पास भरे हुए रिवाल्वर थे। यदि वे चाहते तो प्राण भय से भागते हुए सरकारी अफ़सरों में से कुछ को निश्चय ही मार सकते थे, और खुद बच कर निकल भी जा सकते थे। पर उन्होंने यह कुछ भी नहीं किया।

आधे घन्टे बाद, सार्जेन्टों के साथ सशस्त्र पुलिस का दल आ धमका। पर उनकी हिम्मत नहीं पड़ती थी इन दो बहादुर नौजवानों के पास फटकने की। दूर ही खड़े वे भय से कांप रहे थे। दोनों नवयुवकों ने अपने पास के भरे रिवाल्वर निकाल कर दूर फेंक दिये और पुलिस अफ़सरों को अपने गिरफ़्तार कर लेने का इशारा किया। "इन्कलाब जिन्दाबाद" और "साम्राज्य-वाद का नाश हो" के नारे से असेम्बली भवन गूंज उठा। दोनों वीर जोरों से नारे लगा रहे थे। आज भारत के बच्चे २ की जबान पर खेलने वाले यह दोनों नारे पहले इन्हीं दो नौजवानों ने लगाये थे। नारे लगाने के साथ ही इन्होंने कुछ लाल पर्चे भी बांटे। वह पर्चे "हिन्दोस्तान रिपब्लिकन आर्मी की ओर" से निकाली गई टाइप की हुई एक अपील थी, जिसमें लाल स्याही से छपा एक शीर्षक था। अपील का प्रथम वाक्य था—"बहरों को सुनाने के लिये जोर से कहना पड़ता है" पर्चे में देश में होने वाले क्रान्तिकारी कार्यों का समर्थन करने के बाद असेम्बली के सदस्यों

से कहा गया था, "जनता के प्रतिनिधि अपने निर्वाचकों के पास लौट जावें, और जनता को भावी महाक्रान्ति के लिये तैयार करें"।

दो पुलिस सार्जेन्ट और कुछ सिपाही आगे बढ़े। सरदार भगतसिंह और वीर बटुकेश्वर दत्त स्वेच्छा से बन्दी बन गये। रंग मंच से अदृश्य होने के पहले एक बार उन्होंने फिर "इन्किलाब जिन्दाबाद" और "साम्राज्यवाद का नाश हो" के नारे लगाये। प्रतिध्वनि से असेम्बली भवन गूंज उठा। भयभीत दर्शक आश्चर्य चकित हो देखते रह गए !

घटना के बाद

सरदार भगतसिंह और वीरवर बटुकेश्वरदत्त गिरफ़्तार करके नई दिल्ली की गढ़ी नुमां पुलिस चौकी में पहुँचा दिये गये। दोनों वीर अलग २ दो कोठरियों में बन्द कर दिये गये। कुछ मिनटों के बाद वहां के एक खुफ़िया पुलिस के अफ़सर साहब ऐंठते अकड़ते कोठरी के दरवाजे पर आकर गर्जने लगे।

"तुम्हारे ऐसे लौंड़ों को मैं दो मिनट में ठीक कर देता हूं। अपने आपको तुमने समझ क्या रक्खा है। तुम्हारे साथियों ने सब बातें कह दी हैं, भला चाहते हो, तो तुम भी सब साफ़ २ कह दो वर्ना........। "इत्यादि दोनों वीर मुसकरा दिये। अफ़सर साहब मुंह बनाते हुये लौट गये।

कुछ देर बाद, काकोरी षडयन्त्र केस के बहु ख्यातनामा श्री तसद्दुकहुसेन, डी० एस० पी० इम्पीरियल सी० आई० डी० तशरीफ़ लाये। आते ही आपने बड़े तपाक से हाथ मिलाकर खाली कोठरी में बिना किसी सामान के बन्द किये जाने पर अफ़सोस प्रकट किया। स्थानीय अधिकारियों को बुलाकर डांट बताई और आवश्यक सामान को मंगवा कर कोठरियों में रखवाने के बाद बात-चीत प्रारंभ की। बात ही बात में आपने यह मालूम कर लिया कि दोनों युवक तीन दिन पहले देहली आ गये थे। दो दिन से दर्शक पास द्वारा वे बराबर योरपियन पोशाक में, सब सामान लेकर असेम्बली आते, और यहां से लौटने पर

सिनेमा देखने जाते, इतना ही नहीं आपने जिस सामान की ज़रूरत हो उसे ला देने का आश्वासन देकर वीरवर बटुकेश्वर दत्त से एक सूची भी उन्हीं की लिखावट में हस्तगत कर ली पर इसके आगे कुछ हाथ न लगा। खुफ़िया पुलिस का छल, बल, कौशल और धमकी सभी व्यर्थ सिद्ध हुये।

इधर देश में इस घटना से एक विराट हल-चल मच गई। किसी ने इन गुमनाम युवकों के प्रति मौन-सहानुभूति प्रगट की। तो किसी ने आलोचना करते हुये, उन्हें पागल, पथभ्रष्ट और राजनैतिक उन्मादी बताया। कुछ आवश्यकता से अधिक बुद्धि-मान महानुभावों ने तो उन्हें पुलिस और सरकार का एजेन्ट बताने में ही अपना गौरव समझा। अखबार के कालम के कालम इस बुद्धिमानी के प्रदर्शन में रंगे गये। घर में बैठे प्रियतमा के शब्दों पर बलिहार होने वाले ये महारथी, तलवार की धार पर चलकर अज्ञातनामा शहीद बनने वालों के कार्यों का मूल्य आंक ही कैसे सकते थे? ऐसे कार्यों का मूल्य आंकने के लिये चाहिये। ग़ुलामी की वेदना से जलता हुवा व्याकुल दिल, जोश से उभार खाता हुवा, परेशान दिल, शहादत का परवाना बनने के लिये दीवाना दिल।

लाहौर षड्यन्त्र के बयानों से साफ़ ज़ाहिर है कि यह दोनों कार्य-सान्डर्स आक्रमण व असेम्बली-भवन-बम घटना "हिंदोस्तान सोशलिष्टरिपब्लिकन एशोसियेशन" हिन्दुस्तान की एक प्रमुख सुसंगठित क्रांतिकारी संस्था द्वारा ठन्डे दिल से अच्छी तरह

विचार कर लेने के बाद, किये जाने का फ़ैसला दिया गया था। उस पर उन लोगों की यह तुर्रेबाज़ियां जो स्वयं उस आंदोलन की वर्णमाला से भी अपरचित थे, एक आश्चर्य की चीज़ अवश्य ही मालूम देती है।

सामाज्यवादी पुलिस ने इस अवसर से लाभ उठाना चाहा। देहली जेल में अगल बगल पर एक दूसरे से अलग तंग और गंदी कोठरियों में बन्द, बातचीत की कौन कहे एक दूसरे की सूरत देखने की सुविधा न पाने वाले, बाहरी दुनियां से एक दम अलग कर दिये गये इन दोनों नौजवानों के पास पुलिस के अधिकारी समाचार पत्रों के ये विरोधी लेख और कुछ नेताओं द्वारा निकाले गए ऊटपटांग वक्तव्य लेजाकर उन्हें दिखाते थे और कहते थे देश तुम्हारे काम से घृणा करता है, तुम्हे देश द्रोही समझता है, अब भी समय है सब कुछ पुलिस से कह कर अपना रास्ता साफ़ कर लो, पर दोनों वीर अपने स्थान पर अटल रहे। स्वार्थी दल ने इस पर एक कमीनी चाल चली। जनता को बरगलाने, सहयोगियों को धोखे में डालने के लिये पत्रों में प्रकाशित कराया गया कि वीरवर बटुकेश्वर दत्त ने बयान दे दिया है, वे मुख़बिर बन गए हैं। सामाज्यवादी सरकारें तो इस प्रकार के घृणित और गन्दे प्रचार पर ही आधारित हैं। जनता यदि वास्तविकता से परिचित हो कर अधिकार रक्षा पर कमर कस ले तो इनका अस्तित्व धूल में मिल जाये इसमें कोई सन्देह नहीं।

अभी उसी दिन से ऐसी ही एक और घृणित चाल चली गई थी देहली में। काकोरी के भूतपूर्व राजबंदी "राजबंदी छुड़ाऊ कानफ्रेंस" में शामिल होने देहली गये थे। देहली के कमिश्नर ने उन्हे ६ घन्टे के अन्दर देहली छोड़ने और इसी बीच में किसी भी जुलूस या सभा में शामिल होने की मनाही की थी। इन लोगों ने कमिश्नर की इस आज्ञा को "नागरिक अधिकारों" पर हमला मान कर उसको मानने से इनकार किया। जुलूस में शामिल हुये।

इन्हें गिरफ्तार करके एक ओर तो छबीली भठियारी की सराय पर कब्जा करके बनाई गई देहली जेल में ठूंस दिया गया और दूसरी ओर अखबारों में—जनता को भ्रम में डालने के लिये प्रकाशित करा दिया गया कि यह सब लोग पुलिस द्वारा गाजियाबाद लाकर छोड़ दिये गये। अस्तु!

देहली का नाटक

७ मई १६२६ को देहली जेल में एडीशनल मेजिस्टे्ट मि० एफ़० वी० पूल के सामने मुकदमा शुरू हुआ। सबेरे से ही जेल की ओर जाने वाली सभी सड़कों, जेल के दरवाजे तथा जेल के चारों ओर पुलिस का सख्त पहरा था, लाठी और रायफ़लों का जमघट था। ६ पत्र प्रतिनिधि, अभियुक्तों के माता पिता, कुछ रिश्तेदार और वकीलों के सिवा और कोई भी अन्दर नहीं जाने पाया। इतना ही नहीं अन्दर जाते समय इन सबकी भी अच्छी तरह तलाशी ली गई

थी। अदालत में आते जाते अभियुक्त "इन्किलाब जिन्दाबाद" और 'साम्राज्यवाद का नाश हो' के नारे लगाते थे। उन पर दफ़ा ३०७ (हत्या करने की कोशिश) और विस्फोटक कानून की दफ़ा ३ लगाई गई थी। सुबूत की ओर से कुल १६ गवाह गुजरे। अभियुक्तों ने अपना बयान देने से इनकार कर दिया, दो दिन में मुकदमा समाप्त हो गया। मैजिस्ट्रेट ने उन्हें उपरोक्त दोनों धाराओं में सेशन सुपुर्द कर दिया।

सेशन अदालत की कार्यवाही भी उसी प्रकार के कड़े पुलिस के पहरे और पाबन्दियों के साथ, ४ जून १९२९ से मि० मिडलटन सेशन जज देहली के सामने देहली जेल में ही शुरू हुई, और १२ जून १९२९ को समाप्त हो गई।

सरकारी गवाहों के बयान हो जाने के बाद दोनों अभियुक्त वीरवर बटुकेश्वरदत्त तथा सरदार भगतसिंह ने अपना इतिहास प्रसिद्ध संयुक्त वक्तव्य दिया, आपने कहा:—

"हम लोग संगीन जुर्मों के अभियुक्तों की हैसियत से यहाँ उपस्थित हैं और इस मौके पर हम अपने आचरण की सफाई पेश करते हैं। (हमारे आचरण के सम्बन्ध में) निम्नलिखित प्रश्न उपस्थित होते हैं:—

पहला प्रश्न है कि क्या एसेम्बली भवन में बम फेंके गये थे और फेंके गये तो क्यों? दूसरा सवाल यह है कि नीचे की अदालत ने हम पर जो फर्द जुर्म लगाया है, क्या वह सत्य है अथवा नहीं? पहले प्रश्न के उत्तर में हमारा जवाब है कि हाँ

असेम्बली में बम फेंके गये थे, किन्तु अपने आप को चश्मदीद गवाह कहलाने वालों में से कुछ गवाहों ने झूठा बयान दिया है और चूंकि हम अपनी कार्य-पात्रता को, उस हद तक जहां तक कि वह जाती है और जिस रूप में कि वह है, अस्वीकृत नहीं करते, इसलिए उन गवाहों के बारे में हमारा यह बयान जिस लायक वह है, वैसा ही समझा जाय। उदाहरण के तौर पर हम यह कह सकते हैं कि सार्जेण्ट टेरी की यह गवाही, कि उसने हम में से एक आदमी के हाथ से पिस्तौल छीनी, सरासर बनाई हुई झूठ है। क्योंकि जिस समय हमने आत्मसमर्पण किया था, उस समय हम में से किसी के पास भी पिस्तौल नहीं था। दूसरे गवाहों ने, जिन्होंने हमारे द्वारा बम फेंके जाते देखने का बयान दिया है, सरासर झूठ बोलने में ज़रा भी संकोच नहीं किया है। जो लोग क़ानूनी स्वच्छता और निष्पक्ष न्याय-दान के लिये प्रयत्नशील हैं; उनके लिये यह (गवाहों की ग़लतबयानी) स्वतः एक नैतिक सबक है। इसी के साथ ही हम सरकारी वकील की निष्पक्षता और अदालत की इस वक्त की न्यायपरख क मनोभाव को स्वीकृत करते हैं।

बम क्यों फेंके गये ?

"पहले प्रश्न के दूसरे अन्श के उत्तर देने में हमें मजबूरन कुछ विस्तार की शरण लेनी पड़ती है और इस प्रकार हमे अपने कार्य के प्रेरक भावों और उन सब परिस्थितियों का पूर्ण और

नितान्त स्पष्ट निरूपण करना पड़ता है, जिससे धीरे धीरे यह बम-दुर्घटना ऐतिहासिककाण्ड में परिणत हो गई है। कुछ पुलिस आफिसरों ने हम से जेल में मुलाकात की थी और उन्होंने हमसे कहा था कि लार्ड इरविन ने बड़ी व्यवस्थापिका सभाओं के संयुक्त अधिवेशन में भाषण देते हुये इस घटना को एक ऐसा वार बतलाया था जो किसी व्यक्ति के प्रति नहीं किन्तु एक संस्था के प्रति किया गया था। जब हमने यहसुना तब हमने बहुत शीघ्र ही यह बात मान ली कि इस घटना का सच्चा महत्त्व बहुत ठीक तौर पर समझ लिया गया है। हम मनुष्यता के प्रेम में किसी से भी पीछे नहीं है और किसी व्यक्ति के खिलाफ़ घृणा भाव रखना तो दूर, हम मनुष्य जीवन वास्तविक रूप में पवित्र समझते हैं। हम तो उस प्रकार के घिनौने कुकृत्य के करने वाले एवं देश के कलङ्क हैं जैसा कि अधकचरे साम्यवादी दीवान चमन लाल हमें कह चुके हैं तथा हम न ऐसे पागल ही हैं जैसा कि लाहोरी 'ट्रिब्यून' और कुछ अन्य लोगों न हमें बतलाया है।

संस्था के साथ आवाज़ बलन्दी

"हम बहुत नम्रतापूर्वक यह दावा करते हैं कि हम कुछ नहीं हैं सिवा इसके कि हम इतिहास के गम्भीर विद्यार्थी हैं और अपने मुल्क की हालत के देखने वाले हैं। तथा हम पाखण्ड और मक्कारी से नफ़रत करते हैं। हमारा यह व्यावहारिक विरोध प्रदर्शन एक ऐसी संस्था के खिलाफ़ था, जो अपने जन्म-

काल ही से न केवल अपना निकम्मापन ही प्रगट करती रही है, बल्कि शैतानी कर सकने की अपनी अत्याधिक शक्ति का प्रमाण भी देती रही है। ज्यों ज्यों हमने इस पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया, त्यों त्यों हम पर इस विश्वास की गहरी छाप पड़ती गई कि यह संस्था दुनियां को भारतवर्ष की बेचारगी और उसकी बेइज्जती दिखलाने के लिए ही कायम है। यह संस्था गैर जिम्मेदार और तानाशाही शासन के विकट प्रभुत्व का प्रतिरूप है। जनता के प्रतिनिधियों ने बार बार राष्ट्र की मांगे पेश कीं और उन राष्ट्रीय मांगों का अन्तिम स्थान कूड़े की टोकरी ही रहा है। एसेम्बली द्वारा पास किये गये पुनीत प्रस्ताव नगण्य समझ कर घृणा से पैरों तले कुचले गये हैं और वह भी कहाँ? वहां, उस नामधारी भारतीय पार्लमिंट के भवन में। दमनकारी और निरंकुश क़ानूनों को तोड़ने के सम्बन्ध में किये गये प्रस्ताव निहायत नव्वाबाना हिकारत की नजर से देखे गये हैं और सरकार के वे क़ानून और प्रस्ताव जिनको जनता के चुने हुए मेम्बरों ने अस्वीकरणीय समझ कर ठुकरा दिये थे, सिर्फ एक क़लम के शोशे से ज्यों के त्यों रहने दिये गये।

थोथा दिखावा

थोड़े में, बहुत प्रयत्न करने के बाद भी हम इस संस्था के अस्तित्व की उपादेयता समझने में नितान्त असमर्थ रहे हैं।

बावजूद इस तमाम शान शौक़त और तड़क भड़क के, जो कि करोड़ों मेहनत-कश लोगों की कष्ट प्राप्य दौलत के बल पर कायम रखी जाती है, हम यह समझते हैं कि यह संस्था एक ढोल की पोल का नज्ज़ारा और शैतानियत से भरा एक बहानो मात्र है। इसके साथ ही हम नहीं समझ पाये हैं उन सार्वजनिक नेताओं के मनोभावों को जो जनता का समय और धन भारत-वर्ष की निरुपाय गुलामी के इस नाटकीय प्रदर्शन के लिए खर्च करते हैं। हम इन सब बातों पर ग़ौर करते रहे हैं और साथ ही हमने गौर किया है, मजदूर दल के नेताओं की गठरी भर गिरफ्तारी पर। ट्रेड डिस्प्यूट्स बिल का प्रारम्भ जिस समय हमें एसम्बली में खींच कर ले आया, उस समय हमने उस बिल की प्रगति को देखा और उस पर किये गये वाद विवादों को भी सुना। यह सब देखने सुनने के पश्चात् हमारा यह विश्वास दृढ़ हो गया है कि यह संस्था तो सब कुछ हड़प जाने वालों का गला घोटू ताकत का-भय त्रस्तकारी स्मारक और निःसहाय मेह-नतकशों की गुलामी का चिन्ह है।

जगाने के लिए बम जरूरी है

"अन्त में तमाम देश भर के प्रतिनिधियों के सादरणीय मस्तक पर अमानुषिक और बर्बता पूर्ण कानून की अपमानजनक गाज गिराई गई और इसका नतीजा यह हुवा कि भूखों मरने वाले और बमुश्किल तमाम अपना पेट पालने वाले लोग अपनी आर्थिक दशा को सुधारने में प्रारम्भिक स्वत्व और एक मात्र

उपाय से वंचित कर दिए गये। कोई भी आदमी जिसने हमारी तरह इन बेज़बान, मनमानी दिशा में हाँक दिये जाने वाले मज़-दूरों के प्रति तादात्म्य भाव अनुभव किया है, संभवतः यह दृश्य अविचलित चित्त से नहीं देख सकता था। कोई भी आदमी जिस के दिल में खून लहराता है, उन आदमियों के लिये जिन्होंने लूट-खसोट करने वालों के आर्थिक भवन के लिये अपना जीवन रक्त दे दिया है–और लूट-खसोट करने वालों की श्रेणी में इस मुल्क में यह सरकार सबसे बड़ी दोहन कर्ता है–अपनो आत्मा के क्रन्दन को नहीं दवा सकता था, और इस निर्दय प्रहार ने हमारे भीतर से वेदना का आक्रोश जबरदस्ती बाहर खींच लिया। इस लिए एक समय गवर्नर जनरल के कार्यकारिणी के क़ानून सदस्य स्वर्गीय सदस्य श्री० एस० आर० दास के उन शब्दों को ध्यान में रख कर, जो उनके उस प्रसिद्ध पत्र में प्रकाशित हुये थे, जिसे उन्होंने अपने पुत्र को लिखा था, और जिन शब्दों का मंशा यह है कि इंगलैंड को अपने सुख-स्वप्न से जगाने के लिये बम ज़रूरी है,–इन शब्दो पर विचार करके हमने असेम्बली की फर्श पर बम फेंक दिए। और यह सिर्फ इस लिए किया कि हम उन आदमियों की ओर से, जिनके पास अपने हृदय को चीरने वाली बेदना को प्रगट करने का कोई साधन नहीं है, घोर विरोध प्रद-र्शित कर दें। हमारा एक मात्र उद्दश यह था कि 'हम लोग बहरों के कान खोल दें, और बेपरवाहों को, अन्यमनस्कों को यथासमय चेतावनी दे दें।

सत्ययुगीय अहिंसा के काल का अन्त

"औरों ने भी इस दशा का इतने ही ज्वलन्त रूप में अनुभव किया है, जितना कि हमने और भारतीय मनुष्यता के महासागर की इस दिखाऊ अक्षुब्धता के भीतर से एक ज़बर्दस्त तूफ़ान फट पड़ने को है। हमने तो सिर्फ खतरे का सूचक झण्डा टांग दिया है, सिर्फ उन लोगों के देखने के लिये जो भागे जा रहे हैं, बिना यह विचार किये कि आगे बड़ा भारी ख़तरा है। हमने तो सिर्फ यह सूचना भर दी है कि सतयुगी अहिंसा के दिन लद गए! उठती हुई पीढ़ी अहिंसा के निकम्मेपन का इतनी अच्छी तरह अनुभव कर चुकी है कि अपने उस अनुभव में अब उसे सन्देह की छाया मात्र भी नहीं रह गई है! मनुष्यता के प्रति हमारी हार्दिक सदिच्छा है और प्रेम से प्रेरित होकर हमने सावधान कर देने का यह तरीका इस लिये अख्तियार किया है कि बेशुमार कष्ट और वेदनायें टाली जा सकें।

"हमने पहले के पैराग्राफ़ में "सतयुगी अहिंसा" शब्द का इस्तेमाल किया है। इस शब्द की व्याख्या कोई व्यक्तिगत विद्वेष भावना या नफ़रत नहीं कीगई। इसके विपरीत हम फिर से यह बात दुहराते हैं कि हम मानव जीवन को अवर्णनीय रूप में पुनीत समझते हैं और हम मनुष्यता की सेवा में अपने प्राण विसर्जन कर देना कहीं उत्तम समझेंगे, किसी को हानि पहुँचाने की तो बात ही नहीं उठती। हम किराये के सिपाही नहीं हैं। भाड़े के

सिपाहियों को यह सिखलाया जाता है कि वे बिना ममता के प्राण नाश करदें। हम मनुष्य जीवन के प्रति आदर भाव रखते हैं और जहां तक बन पड़ता है हम मनुष्य जीवन की रक्षा का प्रयत्न करते रहते हैं और फिर भी हम यह बात स्वीकार करते हैं कि हमने ऐसेम्बली भवन में जान बूझ कर बम फेंके।

"किन्तु वास्तिविक बातें स्वयं अपनी कथा आप कहे दे रही हैं। और बिना कल्पित या सांकेतिक परिस्थितियों एव गृहीत मान्यताओं का सहारा लिये ही (हमारे) इरादे के सम्बन्ध में परिणाम केवल हमारे कार्य के नतीजे के ऊपर से ही निकलना चाहिये। गवर्नमेंट विशेषज्ञ की गवाही के होते हुये भी, जो बम असेम्बली भवन में फेंके गये थे उनकी वजह से सिर्फ एक खाली बेंच थोड़ी सी टूट फूट गई और आधे दर्जन से भी कम आदमियों के थोड़ी थोड़ी खराश सी आ गई। गवर्नमेंट विशेषज्ञ ने इस (हल्की क्षति के) परिणाम को 'जादू मन्तर' कहा है, लेकिन हम इस (हल्की क्षति) में एक निश्चित वैज्ञानिक परिणाम-सूचकता पाते हैं। पहली बात तो यह है कि दोनों बम खाली जगहों में, डेस्कों और लकड़ी के चोघरों तथा बेंचों के बीच फूटे थे। दूसरी बात यह है कि वे आदमी भी जो बम फूटने के स्थान से केवल दो फीट के अन्तर पर थे या तो बिल्कुल बच गये और या बहुत हल्की तड़प के चुटैल हुए। दो फीट के भीतर रहने वालों में मिस्टर पी० आर० राव, मि० शङ्करराव और सर जार्ज शुस्टर थे। सरकारी विशेषज्ञ ने इन बमों को जिस शक्ति का बतलाया

वे यदि वैसे ही होते तो लकड़ी का चौखटा चकना चूर हो गया होता और आस पास कुछ गजों के भीतर के आदमी ठण्ढे होगये। होते इसके अलावा हम बमों को सरकारी प्रतिनिधियों के बैठने के स्थान पर, जहां बहुत से गण्यमान लोग बैठे हुये थे, फेंक सकते थे और अन्त में हम उन सर जान साइमन को भी घेर कर मार सकते थे जिनके अभागे कमीशन को सब लोग घृणा की दृष्टि से देखते हैं। सर जान उस समय प्रेसिडेन्ट महाशय के अतिथियों के स्थान पर बैठे थे। लेकिन यह सब हमारे इरादे से बाहर की बात थी, बम ने सिर्फ उतना ही काम किया जितने के लिये कि वे बनाये गये थे और 'जादू मन्तर' सिर्फ यही है कि हमने जान बूझ कर बमों को निरापद स्थान में फेंका था।

विचार अमर है

"बाद में हमने जान बूझ कर आत्मसमर्पण कर दिया। हमने जो कुछ किया था उसका दण्ड भोगने के लिये हम तैयार थे। साथ ही हम साम्राज्यवादी लूट-खसोट करने वालों को यह बतला देना चाहते थे कि व्यक्तियों को कुचल डालने से वे दाहक विचारों को नहीं मार सकेंगे। दो नगण्य इकाइयों—हम दोनों को कुचलने से राष्ट्र नहीं दबेगा। हम ऐतिहासिक सबक़ फिर से तरो-ताजा करना चाहते थे कि बेस्टाइल (क़ैदखाने) और लेटर्सद-केशे (अन्धाधुन्ध वारण्ट) फ्रांस की क्रांतिकारिणी

हलचल को दबाने में असमर्थ हुये थे। फांसियां और साइबेरिया की खानों की दर्दनाक गुलामी रूसी विप्लव की चिनगारी नहीं बुझा सकी थी। खूनी इतवारों और ब्लेक एन्ड टैन्स (खूंख्वार किराये के सिपाहियों) की वजह से आयरिश स्वतंत्रता की हलचल नहीं मिटाई जा सकी। क्या आर्डिनेन्स (काला क़ानून) और सेफ्टी-बिल भारत में स्वतंत्रता की लपट को बुझा सकता है? षड्यंत्र के गढ़े गए या ढूंढ कर निकाले गए मुकदमे और उन नौजवानों का कारागार वास, जिन्होंने विशालतर आदर्श की झांकी देखली है, भारत में क्रांति की प्रगति को नहीं रोक सकते। लेकिन, समय पर दी गई चेतावनी, यदि उसकी ओर से कान न मूंद लिये जांय तो, प्राणों के नाश और सामूहिक वेदना को रोकने में सहायक हो सकती है। हमने अपने ऊपर यह कार्य भार लिया था कि हम यह चेतावनी दे दें और हम समझते हैं कि हमारा कार्य्य सम्पूर्ण हो गया है।

विप्लव क्या है?

"भगतसिंह से नीचे की अदालत में पूछा गया था कि तुम्हारा, क्रान्ति करना क्या आवश्यक है। जब बल प्रयोग आक्रान्त करने के लिये किया जाता है तब 'हिंसा' कहलाता है और इस कारण उसका नैतिक मण्डन नहीं किया जा सकता। किंतु जब बल का प्रयोग न्याय-कार्य्य के पोषण के लिए किया जाता है तब उस बल प्रयोग का नैतिक समर्थन किया जा

सकता है। बल प्रयोग को बिलकुल विलुप्त कर देना एक खाम-खयाली—एक सतयुगी बात है! यह नई हलचल, जो मुल्क में पैदा हो गई है और जिसकी हमने सूचना भर दी है, उन आदर्शों द्वारा प्रेरित हुई है जिनके द्वारा गुरु गोविंदसिंह और शिवाजी, मुस्तफाकमाल और रजाखां, वाशिंगटन और गरीबाल्डी, लाफाएत और लेनिन, प्रेरित और परिचालित हुए थे। चूंकि विदेश सरकार और भारतीय जनता के नेताओं ने अपने आंख-कान इस नए आन्दोलन के अस्तित्व और उसकी ध्वनि की ओर से बन्दी कर लिए थे, इसलिए हमने एक बार सब को सावधान कर देना चाहा और सो भी ऐसे स्थान पर जहां कि हमारी चेतावनी अश्रुत रह ही न सके।

हमारे इरादे का विस्तार

"अभी तक हमने इस घटना के प्रत्येक भाव का ही दिग्दर्शन कराया है। अब हम अपने इरादों के विस्तार का दिग्दर्शन करा देना आवश्यक समझते हैं। इस बात का विरोध नहीं किया जा सकता कि हमारे अन्दर उन आदमियों में से, जिन्हें थोड़ी बहुत चोट आई, किसी एक के प्रति भी, या व्यवस्थापिका सभा के किसी अन्य व्यक्ति के प्रति भी, द्वेष नहीं है, हमारे 'विप्लव' शब्द से क्या मतलब लेते हैं? उस प्रश्न के उत्तर में मैं कहूंगा कि क्रांति का आवश्यक रूप में यह मतलब नहीं है कि उसमें खून खच्चर हो ही, और न क्रांति में व्यक्तिगत प्रतिशोध ही के लिये कोई स्थान

है। क्रान्ति बम और पिस्तौल का धर्म नहीं है, क्रांति से हमारा मतलब यह है कि वर्तमान वस्तु-स्थिति और समाज व्यवस्था, जो स्पष्टतः अन्याय के ऊपर स्थित है, परिवर्तित हो। पैदा करने वाले या श्रमजीवी, समाज के अत्यन्त आवश्यक अंश हैं। परन्तु वे दोहकों द्वारा नोचे-खसोटे जाते हैं, उनकी मेहनत का फल उन्हें नहीं मिलता, दूसरे उसे हड़प जाते हैं और उनके प्रारम्भिक अधिकार उनसे छीन लिए जाते हैं। एक ओर वह किसान जो सब के लिये अनाज पैदा करता है अपने कुटुम्ब के सहित भूखों मरता है। वह जुलाहा जो दुनिया की मण्डी को बुने हुए कपड़ों से पूर्ण कर देता है, अपना और अपने बच्चों का तन ढाँकने भर को भी नहीं पाता। राज, लुहार और बढ़ई जो बड़े-बड़े विशाल भवन खड़े करते हैं, गन्दे घरों और अनाथालयों में सड़ते खपते मर रहे हैं और दूसरी ओर नोचने-खसोटने वाले पूंजीपति जो समाज के रक्त-शोषक हैं अपनी सनकों की सन्तुष्टि के लिये करोड़ों खर्च कर डालते हैं! ये भयानक असमानताएं और सुविधा-प्राप्ति की यह बलात विषमताएं बड़ी भारी अस्तव्यस्त दुरवस्था की ओर जा रही हैं। इस प्रकार की अवस्था अब अधिक दिनों नहीं रह सकती। यह प्रकट है कि समाज का वर्तमान रंग-ढङ्ग एक ज्वालामुखी के किनारे बैठा हुआ रंग रेलियां कर रहा है। लूट खसोट करने वालों के निष्पाप बच्चे और करोड़ों दोहित, पतित, प्रताड़ित लोग एक भयानक ढालू

जमीन के किनारे पर चल रहे हैं। इस सभ्यता का सम्पूर्ण विशाल भवन, यदि समय पर न बचाया गया, तो ढह कर चूर चूर हो जायगा।

पूर्ण-परिवर्तन की आवश्यकता

"इस लिए पूर्ण-परिवर्तन की बहुत आवश्यकता है। इस लिए उन आदमियों को, जो इस बात का अनुभव करते हैं, यह कर्तव्य है कि वे समाज को साम्यवादी सिद्धान्त की भित्ति पर पुनः संगठित करें। जब तक यह नहीं हो जाता, और जब तक मनुष्य द्वारा मनुष्य का दोहन और राष्ट्र द्वारा राष्ट्र का दोहन, जो साम्राज्यवाद के नाम से मटर गश्ती करता संसार में डोल रहा है, खत्म नहीं कर दिया जाता, तब तक वह वेदना और संहार-क्रीड़ा, जिसकी आशंका से मानवता आज संत्रस्त है, रोकी नहीं जा सकती और युद्ध को खत्म कर देने की तमाम बातें और नवयुग आगमन का तमाम ख्याल एक नग्न पाखण्ड मात्र है।

क्रान्ति से हमारा मतलब ऐसी समाज-व्यवस्था के संस्थापन से है जिसे इस प्रकार के स्खलन का कभी भय न रहे और जिसमें सर्व साधारण की सत्ता का वर्चस्व स्थापित हो। इसका नतीजा यह होगा कि दुनिया में एक ऐसा संसार-संघ स्थापित हो जायगा जिसके कारण मनुष्यता का उद्धार होगा और संसार पूंजीवाद के बंधन और साम्राज्यवाद के कारण दुख से मुक्त होगा।

यह है हमारा आदर्श ! और अपने प्रेरक भाव की इस विचार-धारा से प्रभावित होकर हमने बहुत न्यायपूर्ण और साथ ही बहुत उच्च स्वर पूर्ण चेतावनी दे दी है। यदि हमारी चेतावनी पर ध्यान न दिया गया और यदि वर्तमान शासन-क्रम इसी प्रकार प्राकृतिक शक्तियों के उठते हुये तूफान के बीच बाधक सिद्ध होता रहा, तो फिर एक घमासान एवं घोर युद्ध का होना अवश्यम्भावी है। इसी युद्ध में तमाम बाधायें उखाड़ कर फेंक दी जायेंगी और सर्व जन-सत्ता की स्थापना होगी, और तब क्रांति के आदर्श की पूर्ति का मार्ग प्रशस्त होगा।

मानवता का अविच्छेद्य अधिकार

विप्लव-क्रांति, मनुष्यता व स्वतंत्रता का अविच्छेद्य अधिकार है। सबका अनिर्दिष्ट जन्म सिद्ध अधिकार है। श्रमजीवी ही समाज का सच्चा धुरीण है। श्रमजीवियों की अन्तिम नियति है जनता की सत्ता ! इन आदर्शों और इन विश्वासों के लिये हम प्रत्येक वेदना को जो हमें दी जायगी, आदर से, स्वागतपूर्वक अंगीकार करेंगे। इस विप्लव की बलिवेदी में अर्पित करने के लिए हम अपनी नौजवानी की धूप यह सर्वरस-लाए हैं, क्योंकि इतने महान आदर्श के लिए किसी भी प्रकार का बलिदान अत्याधिक नहीं कहा जा सकता। हम संतुष्ट हैं। हम क्रांति के अवतार की प्रतीक्षा कर रहे हैं !! क्रांति युग युग जीवे !"

आज़ादी के अमर पुजारी
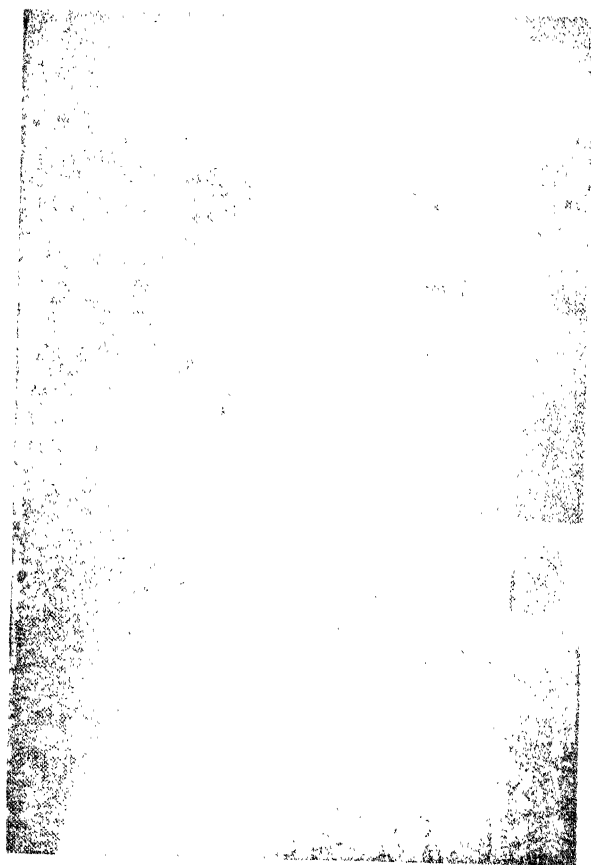
वीरवर गैरीबाल्डी
८ सितम्बर १८४८ को बाहर आकर आप फिर सेना का संचालन करने लगे

धारण, चोर गिरहकाट जैसे जघन्य अपराधों में दण्डित व्यक्तियों के साथ होने वाला व्यवहार किया जाने लगा। ये दोनों राजनैतिक अपराध में सजा पाये व्यक्ति थे। राजवन्दी का सा व्यवहार उनके साथ होना चाहिए था। पर सरकार को गरज क्या थी जो ऐसा व्यवहार करे ?

राजनैतिक कैदियों का यह प्रश्न कुछ दिनों इससे पहले काकोरी षड्यन्त्र में दण्डित होते वालों ने उठाया था। मुकदमा चलते समय उन्होंने इसके लिए १५ दिन अनशन किया और उन्हें कुछ सुविधायें भी दी गईं। सरकार ने उस समय कहा बगैर सजा पाए हुए व्यक्ति कैदियों के अधिकारों की मांग नहीं कर सकते। पर इन लोगों को जब काकोरी षड्यंत्र में सजा देकर उसी दिन भिन्न भिन्न जेलों में भेज दिया गया तो सरकार ने इनके साथ वही अन्य साधारण कैदियों का व्यवहार शुरू किया, फलस्वरूप यू० पी० प्रांत के भिन्न २ जेलों में ८ अप्रैल १९२७ से लगभग ४५ दिन किया घनघोर अनशन युद्ध चलता रहा। अन्त में अमरशहीद स्व० गणेशशङ्कर विद्यार्थी के जेलों में जाकर बाहर आन्दोलन करके मांगे पूरी कराने के लिए समय मांगने पर वह अनशन स्थगित हुआ था, पर सरकार तो अपनी राह पर ही अब भी चली जा रही थी।

राजनैतिक अपराधी व्यक्तिगत स्वार्थ की पूर्ति के लिए दंडित होकर नहीं आते, उनका चरित्र ऊंचा होता है वे पढ़े

लिखे होते हैं। ऐसी दशा में यह स्वाभाविक ही है कि वे पढ़ने लिखने की सुविधा चाहें। मानवोचित व्यवहार जिसमें स्वाभिमान का भी स्थान हो, की आशा करें। सफाई दवादारू और मनुष्योपयोगी भोजन चाहें।

भगतसिंह और बटुकेश्वरदत्त ने राजनैतिक कैदियों को यह अधिकार दिलाने के लिये अपने २ स्थान पर १५ जून से अनशन प्रारम्भ कर दिया।

इधर सान्डर्स काण्ड के सिलसिले में कई प्रान्तों से गिरफ्तार करके अनेकों नवयुवक सेन्ट्रल जेल लाहौर में लाकर बन्द कर दिये गये थे। लाहौर षड़यन्त्र केस चलाने को पुलिस तयारी कर रही थी।

लम्बे अर्से तक भगतसिंह और बटुकेश्वरदत्त के अनशन करने के बावजूद जब सरकार टस से मस न हुई तो लाहौर षड़यंत्र के इन अभियुक्तों ने भी अनशन शुरू कर दिया। इसी बीच ६ जुलाई १६२६ को अनशन की ही अवस्था में सरदार भगतसिंह मियांवाली जेल से लाहौर सेन्ट्रल जेल भेज दिऐ गए। मियांवाली जेल से लाये जाते समय १२ पुलिस के सिपाही, तीन सब इन्स्पेक्टर, एक डिप्टी सुप्रिन्टेन्डेन्ट और एक योरोपियन अफ़सर के पहरेमें वे लाहौर लाए गए। लाहौर स्टेशन पर पहुँचते ही ५० रायफलधारी पुलिस सिपाही आ धमके। २५ दिन के निराहारी निहत्थे, हथकड़ी से जकड़े सरदार भगतसिंह को

जेल पहुंचाने के लिए पंजाब सरकार ने यही साधारण प्रबंध किया था।

अनशन चल रहा था और लाहौर षड्यन्त्र का मुक़दमा शुरू होगया था अभियुक्तों को अदालत आना पड़ता था। इस अनशन से देश में हलचल मच गई, अनेक प्रांतों में राजनैतिक पीड़ित दिवस मनाये गये। देश के कोने २ में सभायें हुईं, अनशनकारियों की मांगों का समर्थन किया गया। जगह २ विराट जलूस निकले। जनता ने प्रदर्शन किये। स्व० श्रद्धेय विद्यार्थी जी लाहौर गये, अनशनकारियों को समझाने की चेष्टा की। पर वे विद्रोही अपने मोर्चे पर धीर भाव से अटल होकर डटे रहे।

जैसे ही जैसे अनशन का समय लम्बा होने लगा सारे देश की आंखें लाहौर जेल की उन काल कोठरियों की ओर लग गईं जहां, देश के एक दर्जन चुने हुए नौनिहाल जीवन-मृत्यु के बीच झूला झूल रहे थे। ये युवक एक स्पष्ट सिद्धांत के लिए डटे थे। उसी के लिए ये चढ़ती जवानी के अधखिले फूल मौत से टक्कर ले रहे थे। टूट जाये, पर गर्दन झुकेगी नहीं, यह थी उनकी ठान।

वे पीछे कैसे हटते? राजनैतिक कैदियों के साथ अब तक किया गया सरकार का व्यवहार उनकी आंखों के सामने था। अंडमन जेल में प्रथम लाहौर षड्यन्त्र के बन्दी पंजाब के पंडित रामरखा का जनेऊ छीन लिया गया। जनेऊ के लिए रामरखा जी ने अनशन व्रत किया, ६० दिन तक सिसक २ कर-तिल तिल घुल कर उन्होंने अपनी जान दे दी, आज देश में कितने लोग हैं जो

उनका नाम तक जानते हों ? जेलों के अन्दर आदमी को कम्मल डाल कर पीटा जाता है, ताकि वह मारने वाले को देख न सके साथ ही बदन पर डन्डे के निशान न पड़ें। मारते २ बेहोश हो जाने पर उसे ठण्डे पानी से भरे हौद में डुबो दिया जाता है और होश आने पर फिर पीटा जाता है। जेल जांच कमेटी रिपोर्ट में भी इसका जिक्र मिलेगा। इस प्रथा को यू० पी० में फालिम तथा पंजाब और अंडमन में गिद्दड़कुट कहते हैं। पंजाब के सरदार मानसिंह कालेपानी की जेल में इसी गिद्दड़कुट की ठोकरों से मौत के घाट उतार दिये गये। किसी ने पूंछा उनके खून का जिम्मेदार कौन है ? बंकाक के बुजुर्ग सरदार केशरीसिंह के सुपुत्र—सरदार प्रतापसिंह—बनारस षड़यन्त्र के बन्दी, बरेली जेल यू० पी० में खपा दिए गये। किसी ने पूंछा इनका हत्यारा कौन है ? बर्मा के के बन्दी, श्याम के इंजिनियर सरदार अमरसिंह पागलखाने पहुँच गये, अनेकों नजरबन्दों ने मिट्टी का तेल बदन पर डालकर आग लगाली और जीवन समाप्त कर दिया। आंखों के सामने इन बातों के रहते जो वे जानते थे कि आज़ादी की लड़ाई अभी जारी है और राजनैतिक कैदी अभी बढ़ेंगे वे, उदासीन कैसे रहते, उनके सामने तो एक ही मार्ग था लड़ना, और वे लड़ रहे थे। ऐसे समय में भी हमारे कुछ खास नेता कुछ ऊंची सतह से कह रहे थे, "जेल में बन्द १०, २० कैदियों की दाल, साग, रोटी और लंगोटी पाजामे की लड़ाई में देश को इस प्रकार फंसा देना, जब कि इसके

सामने बहुत से बड़े २ मरहले हल करने को पड़े हैं, एक बड़ी भारी हिमाकत है।"

अन्त में पंजाब सरकार कुछ झुकी। एक जेल जांच कमेटी बनी, मेम्बरों ने जाकर अनशनकारियों से भेंट की। उन्हें आश्वा-दिया कि उनको तमाम मांगें मानली जायेंगी। स्व० जतीन्द्रनाथ दास की हालत बहुत खराब होगई थी, अतएव इन मांगों में एक यह भी थी कि जतीन्द्रनाथ दास बिना किसी शर्त के रिहा कर दिये जायेंगे। यह घटना २ सितम्बर १९२९ की है। ८१ दिन के अनशन के बाद सरदार भगतसिंह और वीरवर बटुकेश्वरदत्त तथा ५१ दिन के बाद उनके अन्य साथियों ने दूध पीकर अनशन भंग किया।

दूसरे दिन सरकार ने जतीन्द्रनाथ दास को बिना शर्त छोड़ने से इनकार कर दिया। वह उन्हें जमानत पर छोड़ने को तैयार थी। जतीन्द्रनाथदास की हालत बिलकुल खराब होचुकी थी। डाक्टर इनके जीवन से निराश होचुके थे। ऐसी दशा में, जतीन्द्रनाथ दास के भाई किरणचन्द्र दास ने उन्हें जमानत पर छुड़ाना उचित न समझा।

४ सितम्बर १९२९ को एक विचित्र घटना घटित हुई। किसी जगदीशचन्द्र नामक अनजान व्यक्ति ने जो अपने को जतीन्द्रनाथ दास का दोस्त बताता था—जतीन्द्रनाथ को ५ हजार की दो जमा-नतों पर छोड़ने की दरख्वास्त दी जिसे कोर्ट ने मंजूर कर लिया। पर श्री जतीन्द्रनाथ जी ने जमानत पर छूटने से कतई इनकार कर

दिया। उन्होंने साफ़ कहा, मैंने किसी को अपने ज़मानत करने की अनुमति नहीं दी है।

अधिकारियों ने ऐसी दशा में जतीन्द्रदास को मेयो अस्पताल भेजना चाहा, वहां से अम्बुलेन्स गाड़ी आई पर डाक्टरों ने जतीन्द्रदास की अवस्था देखकर उन्हें मेयो अस्पताल ले जाने से इन्कार कर दिया।

इस सरकार की वादे खिलाफी के विरोध में सरदार भगतसिंह और बटुकेश्वरदत्त तथा उनके कुछ अन्य साथियों ने फिर से अनशन शुरू कर दिया।

सरकार की ओर से कहा गया, जतीन्द्रनाथ दास किसी हालत में भी बिना शर्त छोड़े नहीं जा सकते और न सरदार भगतसिंह तथा बटुकेश्वर दत्त को राजनैतिक कैदी के रूप में कोई सुविधा ही दी जावेगी, और न उन्हें षड्यंत्र केस के अन्य विचाराधीन कैदियों के साथ ही रखा जावेगा। क्यों कि ऐसा करना जेल नियम के प्रतिकूल है। जब कि इससे कई साल पहले युक्त प्रान्त में काकोरी षड्यन्त्र केस चलने पर बंगाल में सजा पाने वाले दक्षिणेश्वर बम केस के बन्दी श्री राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी जिन्हें बाद में काकोरी केस में फांसी की सजा दी गई और श्री शचीन्द्र नाथ सान्याल बाँकुड़ा केस के बन्दी जिन्हें बाद में काकोरी केस में आजीवन कारावास का दंड मिला ये सब अपने अन्य साथी विचाराधीन कैदियों के साथ लखनऊ डिस्ट्रिक्ट जेल की ११ नम्बर बारिक में रखे गये थे।

उस समय के लखनऊ जेल के सुपरिन्टेन्डेड और वर्तमान समय के युक्त प्रांतीय जेलों के इन्स्पेक्टर जनरल मेजर सलामत्तुल्ला साहब आज भी इस बात के एक मोतबिर और सर्वमान्य गवाह हैं ।

अन्त में ६६ दिन के अनशन के बाद १३ सितम्बर १९२९ की दोपहर को एक बजे लाहौर बोरस्टल जेल में, राजनैतिक कैदियों के अधिकार प्राप्त की बलि वेदी पर श्री जतीन्द्रनाथदास की जीवनाहुति समर्पित हो गई। उनका देहावसान हो गया। सर कटाने वाला यह वीर हंसते हंसते प्राणों पर खेल गया ।

श्री जतीन्द्रनाथदास के शहीद होने की खबर सारे देश में बिजली की तरह फैल गई। खबर पाते ही अरथी के जुलूस में शामिल होने के लिये लाहौर केलोग पागलों की भांति नंगे पैर, नंगे सर, अपना काम धाम छोड़, बोर्स्टल जेल के फाटक की ओर चल दिये। जेल के सामने कुछ ही क्षणों में नग्न सर-पैर की शोकित जनता का समुद्र उमड़ पड़ा।

करीब चार बजे शहीद जतीन्द्रनाथकी अर्थी किरणचन्द्रदासतथा जेल के तीन छोटे कर्मचारी अपने कंधों पर लेकर सड़क के किनारे पहुँचे। यहां पर अरथी को फूलों से खूब सजाया गया और 'इन्क़लाब जिंदाबाद' 'साम्राज्यशाही का नाश हो' के नारों के साथ जुलूस रवाना हुआ ।

जुलूस में कांग्रेस तथा अन्य दलों के प्रमुख नेता भी शामिल थे, जैसे ही जैसे जुलूस आगे बढ़ा, भीड़ बढ़ती गई, और यह

संख्या लगभग ५० हजार पर पहुँच गई। जहां कहीं से जुलूस गुजरा, मोहल्लों की सड़कें, छत, छज्जे और खिड़कियां आदमियों से ठसाठस भरे थे। लोग अपनी २ जगह से अरथी पर फूल, सुगंध, चन्दन, पैसे वगैरह बरसा रहे थे। इन्कलाब जिन्दाबाद, साम्राज्यवाद का नाश हो, हिन्दोस्तान हिन्दोस्तानियों का, के नारों से उस दिन लाहौर गूंज रहा था।

सभा होने के बाद जुलूस के साथ अरथी स्टेशन पर लेजाई गई, और वहां लकड़ी के एक बक्स में चन्दन, कपूर, इत्र आदि से ढक कर शव, तीसरे दर्जे के एक बन्द डब्बे में रख दिया गया।

१८ सितम्बर को पौने सात बजे हवड़ा एक्सप्रेस लाहौर से रवाना हुई। इसी गाड़ी के एक रिजर्व डब्बे में शहीद जतीन्द्र का शव कलकत्ते जारहा था। शव के साथ मोहनलाल गौतम, डा० बनारसीदास, श्री० ए० बी० वाली, श्री० बटुकेश्वर दत्त की बहन श्रीमती प्रमिलादेवी, तथा क्रांतिकारियों में "भाभी" के नाम से प्रसिद्ध शहीद भगवतीचरन की धर्मपत्नी, श्रीमती दुर्गादेवी बोहरा अपने शिशु श्री शचीन्द्रनाथ बोहरा कहा जाता है कि मिंग्टन रोड गोली कांड में हरी के नाम से इसी बालक का उल्लेख है कल-कत्ते जारहे थे। इसी डब्बे के बगल में पुलिस के ५० जवान जारहे थे। इन्कलाब जिन्दाबाद, शहीद जतीन्द्र जिंदाबाद, साम्राज्यशाही का नाश हो के नारों की तुमुल ध्वनि में गाड़ी ने प्लेट फार्म छोड़ दिया।

१४ सितम्बर को सारे देश में हड़ताल थी। देहली में भी हड़ताल थी। लाहौर एक्सप्रेस के देहली स्टेशन पहुँचने पर, एक लाख जनता ने क्रांतिकारी नारों से शव का स्वागत किया, उस पर फूल चंदन चढ़ाये, वरफ बदला गया। भीड़ में कई आदमी घायल होगये थे उन्हें अस्पताल भेज दिया गया। आगरे में भी हज़ारों आदमियों ने अपनी श्रद्धा के फूल शव पर चढ़ाये।

कानपुर में गाड़ी रात को दो बजे पहुँची,। स्टेशन पर उच्च-अधिकारियों के साथ २५० शसस्त्र पैदल तथा घुड़सवार पुलिस डटी हुई थी। गाड़ी के पहुँचते ही पं० जवाहरलाल नेहरू और श्रद्धेय बाबू पुरुषोत्तम दास टण्डन शव के डब्बे में गये। उनका हृदय भरा हुआ था। आंखे डबडबा रही थीं। प्लेटफार्म पर खड़ी ५ हज़ार जनता उन्मत्त हो क्रांतिकारी नारे लगा रही थी। उसने अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

इलाहाबाद और मुग़लसराय पर भी यही हालत रही। हावड़ा स्टेशन के बाहर और भीतर पुलिस का बहुत जबरदस्त प्रबन्ध था। करीब डेढ़ लाख की संख्या में जनता स्टेशन पर एकत्रित थी। गाड़ी पहुंचते ही क्रान्तिकारी नारों से स्टेशन कांपने लगा। शव गाड़ी से उतारा गया। चन्दन और फूलों की खूब वर्षा हुई। सजी हुई अर्थी में उसे रख कर जुलूस टाउन हाल को रवाना हुआ। टाउन हाल में एक विराट सभा हुई जिसमें अपार
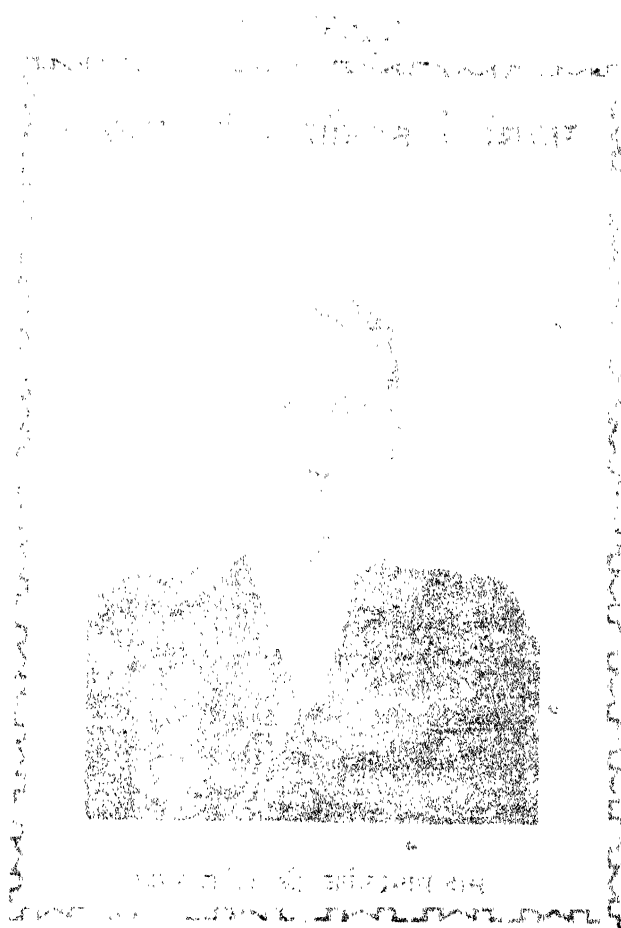
जनता उपस्थित थी। रात भर शव टाउन हाल में रहा।

१९ तारीख को सुबह ७ बजे टाउन हाल से जुलूस फिर रवाना हुआ और २। बजे स्मशान घाट पहुँचा। जहां किरणचंद्र दास ने अपने भाई का दाह संस्कार किया। अन्तिम दर्शनों के लिए जनता चिता पर टूटी पड़ रही थी, पचासों फोटो ग्राफर फोटो ले रहे थे। इस प्रकार शहीद जतीन्द्र, वह जतीन्द्र—जिसका नाम काकोरी षड़यन्त्र केस में कालीबाबू के रूप से आया, जिसके पता लगाने में बंगाल और युक्तप्रान्त की पुलिस लाख सर पटकने पर भी असफल ही रही, माता के चरणों पर बलिहार हो गया।

अन्त में जेल नियमों मे परिवर्तन हुआ। ए०, बी०, क्लास का निर्माण किया गया। ११५ दिन के कठिन उपवास ने कुछ काम कर दिखाया। जो सरकार कहती थी कुछ न किया जायगा उसे ही कुछ करना पड़ा।

कहावत है—

"रहिमन चाक कुम्हार को मांगे दिया न देय,

छेदन..।"

लाहौर केस

लाहौर षडयंत्र-सान्डर्स काण्ड-से सम्बन्धित मुकद्मा अपनी कई विशेषताओं के कारण भारतीय राजनैतिक मुकदमों में अपना खास स्थान रखता है।

वादी, शिकायत करने वाला ही जब न्यायाधीश हो तो न्याय का सुन्दर और सन्तोषजनक होना स्वाभाविक (?) ही है। भारतीय राजनैतिक मुकद्मों में जनता को इसके बहुत कुछ प्रमाण मिल चुके हैं। लाहौर षडयंत्र के अभियुक्त भी इस बात को बहुत अच्छी तरह जानते थे, पर वे इस अवसर का उपयोग अपने आदर्श और आन्दोलन का प्रचार तथा प्रदर्शन में करके, भारत की आम जनता के बीच तीव्र राजनैतिक चेतना उत्पन्न कर देना चाहते थे।

राय साहब श्रीकिशन, स्पेशल मैजिस्ट्रेट की अदालत में मुकद्मा पेश हुआ। अदालत और रास्ते सभी पर पुलिस का कड़ा पहरा रहता था। दर्शक की तो बात ही क्या ? सफ़ाई के वकील और मुकद्मों की पैरवी करने वाले अभियुक्तोंके मित्र तथा रिश्तेदार भी पुलिस से पास लेने के बाद, पुलिस द्वारा शरीर की कड़ी तलाशी लेने कर अदालत में जाने पाते थे। मातायें और बहनें भी इस तलाशी से बची न थीं। देश का ध्यान इस मुकदमें की ओर खास तौर से था। बड़े २ नेता भी ख़ास दिलचस्पी रखते थे। स्व० पंडित मोतीलाल नेहरू, पं० जवाहर जी नेहरू, बाबा

गुरुदत्तसिंह, कुमारी लज्जावती, डा० सत्यपाल, डा० आलम, डा० किचलू, हिन्दोस्तानी सेवादल के संस्थापक डा० हार्डीकर और श्री सुभाषचन्द्र बोस आदि नेता मुकदमे को देखने अदालत आये। हमारे इन आदरणीय नेताओं में से अनेकों को लम्बे अर्से तक पास न देकर पुलिस ने बाहर खड़ा रक्खा, इतना ही नहीं, कुछ को तो घन्टों पानी में भीगते खड़े रहकर पास की प्रतीक्षा करनी पड़ी। मातायें और बहनें जो अदालत में आती थीं उनकी ओर देखकर पंजाब की सभ्य पुलिस के सिपाही अश्लील शब्द बकते थे। अश्लील भाव भंगी करते थे। कई बार तो अभियुक्तों के बालक को उनसे मिलते समय पुलिस ने बड़ी बेदर्दी के साथ छीन कर अलग कर दिया पर अभियुक्त अपने मार्ग पर शान्ति और दृढता के साथ चलते रहे।

"इन्कलाब जिन्दाबाद" 'साम्राज्यशाही का नाश हो' इत्यादि क्रान्तिकारी लगातेहुये वे एक अजब मस्तानेपन से अदालतमें क़दम रखते थे। कभी २ भावपूर्ण राष्ट्रीय कवितायें भी गाई जाती थीं। 'काकोरी दिवस' आदि के अवसर पर "खूनी कपड़ा" बांधकर उन्होंने प्रदर्शन भी किया। जनता को भी थोड़ी बहुत पहुँच पाई, उनके इस अनोखे और निडर व्यवहार से बहुत प्रभावित हुई।

राजनैतिक कैदियों के अधिकार प्राप्ति के लिये लड़े गये उस इतिहास प्रसिद्ध अनशन के बाद; जिसमें प्रणवीर श्री जती-न्द्रनाथदास शहीद होगये। देश में एक तूफ़ान उठ खड़ा हुवा। भारतीय नौजवानों पर क्रान्तिकारी आन्दोलन का प्रभाव व्यापक

रूप से पढ़ने लगा। और अभियुक्तों का अदालत में आकर प्रदर्शन करना उसमें और भी अधिक सहायक हुआ। सरकार इस बढ़ते खतरे को देख थर्रा उठी। उसने मुकदमें को शीघ्र समाप्त करने के लिये कार्रवाई को मुख्तसर कराने के लिये हाई-कोर्ट में दरख्वास्त दी पर मौजूदा कानून में ऐसी कोई सुविधा न होने के कारण हाईकोर्ट ने उस दरख्वास्त को नामंजूर कर दिया।

इसी बीच एक अप्रिय घटना हो गई। अदालत में बयान देते समय एक मुखबिर ने अभियुक्तों को अपमानित करने का कोई प्रयत्न किया। परिणाम स्वरूप एक अभियुक्त ने उत्तेजित हो उसकी ओर एक जूता फेंक कर मारा। पुलिस तो अवसर ढूंढ़ रही थी। उसकी नादिरशाही शुरू हो गई। तमाम अभियुक्तों के हथकड़ियां अदालत के अन्दर ही डाल दी गईं। विरोध करने पर मजिस्ट्रेट के सामने ही उन्हें कुत्ते की तरह घसीटा गया। डंडों से पीटा गया। मां बहनों को भद्दी से भद्दी गालियां दी गईं। कठपुतली की तरह मजिस्ट्रेट बैठे देख रहे थे और सरकार की लाडली पुलिस उन्हीं की आंखों के सामने क़ानून का गला घोंट कर नंग नाच कर रही थी।

मामला यहीं पर नहीं रुका। ३०० जवानों के साथ जाकर पुलिस के बहादुर अधिकारियों ने जेल में जो व्यवहार किया उसे सुन कर बेशर्मी भी शर्म के मारे मुंह ढांक कर रो रही थी। कालिमा अपना मुह छिपाने के लिये परेशान हो जगह खोजती फिर रही थी। एक की गलती पर--जिस ग़लती के लिये क्षमा

याचना को गई हो--जिस गलती के लिये पश्चाताप प्रकट किया गया हो -यह सब कांड होना ब्रिटिश राज्य के लिये क्या कभी गौरवास्पद कहा जा सकेगा ?

दूसरे दिन अदालत में प्रवेश करते हुए एक अभियुक्त ने चिल्लाकर कहा थाः——

"मजिस्ट्रेट साहब देख लें हमें बुरी तरह घसीटा जा रहा है, जेल के अन्दर ३०० पुलिस केसिपाहियों ने जाकर हमें बुरी तरह पीटा है। हमें अपमानित किया है। हममें से अनेकों के पाखाने के मुकाम में डंडे डाले गये हैं। हमारे कई साथी इतनी बुरी तरह से घायल हो गये हैं। कि वे उठ नहींसकते, वे अस्पताल में पड़े हैं।

मजिस्ट्रेट साहब निरीह बच्चे की तरह सुन रहे थे। कठ-पुतली नाचती है किसी दूसरे की उंगली से शक्ति पाकर, अन्यथा वह तो एक निर्जीव काठ का टुकड़ा मात्र है।

एक का बलिदान लेकर भी नौकरशाही ने राजनैतिक कैदियों के लिये कुछ न किया था अतएव सरदार भगतसिंह और बटुके-श्वरदत्त तथा कुछ अन्यान्य अभियुक्तों ने फिर अनशन किया यह अनशन लगभग १॥ मास चला।

अनशन की अवस्था में अभियुक्त कमजोरी के कारण अदा-लत आसकने में असमर्थ हो रहे थे। सरकार इस दिखावे को भी अधिक दिन नहीं चलाना चाहती थी। अतएव असेम्बली में एक कानून पेश किया गया जिसमें अभियुक्तों की अनुपस्थिति में

भी मुकद्दमा चलते रखने की व्यवस्था की गई थी, पर जनता उस समय इतनी प्रभावित थी कि उस समय की जैसी निकम्मी असेम्बली ने भी उसे ठुकरा दिया। उसे पास नहीं किया।

साम्राज्य शाही सरकार के क़ानून उसे काम में सुविधा पहुँचाने के लिये होते हैं, बाधा पहुँचाने के लिये नहीं। और यदि कोई क़ानून बाधक बनने की दशा में आजाता है तो उसे रद्दी की टोकरी में फेंक कर उसी समय एक सुविधा जनक नया क़ानून गढ़ लिया जाता है। यह तो गुलाम भारत के कुछ धुरंधर विद्वान ही हैं जो कार्य से अधिक क़ानून की परवाह करते हैं।

भारत सरकार ने एक नया आर्डिनेन्स इस मकसद को पूरा करने के लिए गढ़ा। वायसराय साहब ने उस की घोषणा की। लाहौर षड्यन्त्र का मुक़दमा करने वाली पुरानी अदालत समाप्त हो गई। तीन जजों का नया ट्रिब्यूनल निर्माण किया गया। फौजी शासन की तरह सरसरी तौर से फिर से मुकदमा शुरू हुआ। अभियुक्तों ने इस सारे तमाशे को बेकार समझ मुक़द्मे में भाग लेने से इनकार कर दिया। तमाशा एकतर्फा ही चलने लगा। इन लोगों ने सफाई भी नहीं दी। उनकी गैरहाजिरी में ही मुकदमे का फैसला भी सुना दिया गया। अनेकों को लम्बी लम्बी सजायें तथा सरदार भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरू को फांसी का पुरस्कार मिला।

७ अक्टूबर १९३० को ट्रिब्यूनल ने फांसी की सजा सुनाई और फांसी के वारन्ट बना कर तारीख मुकर्रर कर दी। आर्डिने-

न्स के द्वारा ट्रिब्यूनल बनाया गया था इस लिए उसकी अपील हाईकोर्ट में नहीं हो सकती थी।

सोचा गया प्रिवी कौंसिल का दरवाजा खटखटाया जाये। न्याय पाने की आशा से नहीं वरन विदेशों में क्रांतिकारी आँदोलन के प्रचार के उद्देश से। पर प्रिवी कौंसिल ने कुछ सुनने से ही इनकार कर दिया।

फांसी पाये हुए कैदी की ओर से दया प्रार्थना की अपील जेल से वायसराय के पास भेजी जाती है। सरदार भगतसिंह ने इस प्रकार से प्राण भित्ता मांगने से साफ इनकार कर दिया। उन्होंने ऐसी किसी भी अपील पर हस्ताक्षर नहीं किये।

देश में इन सजाओं के खिलाफ विराट आंदोलन उठ खड़ा हुवा। देश के तमाम प्रांतों में स्थान स्थान पर सभायें कर के लोगों ने इन फाँसी की सजाओं को परिवर्तित करने की मांग पेश की। तमाम प्रांत के लाखों निवासियों ने एक अपील पर हस्ताक्षर कर के वायसराय से प्रार्थना को कि वे इन फाँसी की सजाओं को परिवर्तित कर दें, देश के अनेकों प्रमुख नेताओं ने इसी के लिये प्रयत्न किया। समाचार पत्रों ने अग्रलेख लिख कर अनुरोध किया, पर नौकरशाही तो तुली थी कुछ और ही करने पर।

"प्रताप" में पं० बालकृष्ण जी शर्मा ने एक लम्बा लेख इसी विषय पर लिखा जो किसी व्यक्ति अथवा दल के नहीं वरन् देश को आम जनता के भावों को व्यक्त करता था, उसके कुछ अंश हम यहाँ अपने पाठकों के सामने रखते हैं।

उसे देख करके पाठक समझ सकेंगे कि देश की जनता उस समय क्या चाहती थी, सरदार भगतसिंह के प्रति उसके क्या भाव थे।

प्रताप
२२ मार्च १९३१

सरदार भगतसिंह ज़िंदाबाद !

[ले०—बालकृष्ण शर्मा]

"सुना गया है कि सरकार बहुत ही जल्द भगतसिंह और उनके साथियों को फाँसी पर चढ़ा देने का इरादा कर रही है—उसका यह काम इस समय बुद्धिमानी पूर्ण न होगा।"

"भगतसिंह अमर है। फाँसी की तख्ती और जल्लादकी रस्सी, न्याय का रक्त रंजित तांडव और राजनीति की रक्त लोलुप और कुटिल चाल—सरदार भगतसिंह को मार नहीं सकती। हम भगतसिंह के पन्थ के पथिक नहीं हैं, हम यह चाहते भी नहीं हैं कि हमारे नौनिहाल उस पथ का अनुसरण करें। किन्तु हम यह बात डंके की चोट कह देना चाहते हैं कि भगतसिंह हमें अपने छोटे भाई से भी अधिक प्यारा है, हमारा यह परम सौभाग्य था कि हम भगतसिंह को बहुत निकट से देख सके। हम भारतवर्ष की सम्पूर्ण नौकरशाही को यह बतला देना चाहते हैं कि भगतसिंह एक हिंसक पशु नहीं है, वह वृत्ति से हत्यारा नहीं है, वह खूंख्वार नहीं है। किसी भी देश का युवक—जितना सच्चा, चरित्रवान, वीर, असन्तोषी, आदर्शवादी, उत्सुक, निखरा

हुआ तप्त स्वर्ण—हो सकता है, वह भगतसिंह है। लार्ड इरविन भी बाल बच्चों वाले हैं। वे भी इस बात पर जरा हृदय से विचार करें। यदि भगतसिंह, आज लार्ड इरविन का पुत्र होता तो हमें विश्वास है, लार्ड इरविन उसे प्यार करते। भगतसिंह खूंख्वार नहीं है, वह बड़ा सुसंस्कृत, भोला-भाला, पगला सा नौजवान है। ऐसे बालक को कौन प्यार नहीं करता? देश भर की माताएँ भगतसिंह को अपनी कोख के जाये की तरह प्यार करती हैं। मुल्क भर की बहनें भगतसिंह को अपने सहोदर भाई की तरह स्नेह, करती हैं। भारतवर्ष के युवक भगतसिंह को अपने बड़े भाई या छोटे भाई की तरह चाहते हैं। भगतसिंह हमारी वत्सलता, हमारे स्नेह, हमारे आदर और प्यार का व्यक्त मूर्ति रूप है। सरकार सहृदता, मानवता और बुद्धिमत्ता के नाम पर अपने फैसले में परिवर्तन करदे। इससे दोनों देश एक दूसरे को अधिक अच्छी तरह समझ सकेंगे। उनके बीच की खाई मुमकिन है कम चौड़ी हो जाये।"

देश की जनता सरदार भगतसिंह की प्राण रक्षा के लिए व्याकुल थी, ऐसे ही समय देश का विराट जन आन्दोलन—१९३० का सत्याग्रह स्थगित हुआ तथा कांग्रेस के प्रतिनिधि महात्मा गान्धी और ब्रिटिश सरकार के प्रतिनिधि वायसराय में एक विराम संधि हुई पर यह निरी खोखली विराम सन्धि भगतसिंह के लिए कुछ न कर सकी, नौकरशाही के उस समय की मन की मंशा का प्रमाण इससे अधिक और क्या मिलेगा?

प्रतिहिन्सा की वेदी पर

२३ मार्च १९३१ को सबेरे ही से लाहौर में बड़ी सनसनी थी। सरदार भगतसिंह, राजगुरु, और सुखदेव की फांसी मुल्तवी और प्रिवी कौन्सिल में अपील की आज्ञा मांगने के लिये दी गई दरख्वास्तों का आज फैसला होने वाला था। हाईकोर्ट के बाहर जनता की एक विराट भीड़ जमा थी। सफाई के वकील ने कहा २७ अक्टूबर १९३० इन लोगों की फांसी की तारीख आर्डीनेन्स द्वारा बने हुये स्पेशल ट्रिब्यूनल ने मुकर्रर की थी। इन कैदियों को उस दिन फांसी नहीं दी गई। आज ट्रिब्यूनल भी खत्म हो चुका है, और उसको बनाने वाला आर्डीन्नेस भी। फांसी का वारन्ट वही अदालत निकाल सकती है जिसने सज़ा दी हो, क़ानून के मुताबिक सरकार या हाईकोर्ट फांसी का वारन्ट नहीं निकल सकता। न्यायाधीशों ने इस दलील को न मान कर दोनों दरख्वास्तें नामंजूर करदीं।

सरकारी वकील ने दौड़ धूप करके उसी रोज चुपचाप इन तीनों नर रत्नों की फाँसी का वारन्ट हाईकोर्ट से तैयार करा लिया। पर यह बात बिल्कुल गुप्त रक्खी गई।

उस दिन शामको चार बजे लाहौर सेन्ट्रल जेल के इन्सपेक्टर जनरल के आने की खबर उड़ी। साधारणतया जेल शाम को ६ बजे बन्द होती है। पर आज ४ बजे शाम से ही साधारण कैदी बारिकों में ठूँसे जाने लगे। राजनैतिक कैदी तो पहले ही बन्द कर

दिये गए थे। ५ बजे तक तमाम जेल बन्द हो गई। कोठरियों में बन्द यह तीनों वीर दूसरे दिनके प्रोग्रामकी बातें कर रहे थे। चन्द घन्टों के ही अन्दर कोई उनकी जीवनलीला समाप्त करने की सोच रहा है इसका उनको पता भी न था।

जेल के चारों ओर सशस्त्र पैदल और घुड़सवार पुलिस का सख्त पहरा था। शाम को ६ बजे के बाद जेल के जो वार्डर या अफसर जेल के अन्दर थे वे दूसरे दिन सुबह तक जेल में ही रहे। किसी कर्मचारी को उस दिन शाम को बाहर निकलने की आज्ञा नहीं मिली।

फांसी से पहले रिश्तेदारों को शाम को मिलने की आज्ञा दी जाती है। सरदार भगतसिंह के पिता किशनसिंह को २३ ता० की शाम को अपने पुत्र से अन्तिम मुलाकात कर लेने की सूचना मिली। अन्य बन्दियों के रिश्तेदारों को भी उसी शाम को वैसे ही सूचना मिली, पर जेल के फाटक पर पहुँचने पर जेल अधिकारियों ने पिता, भाई बहिन और माता के सिवा अन्य किसी को भी मिलने देने की इजाजत देने से साफ इन्कार कर दिया। परिणाम स्वरूप इन नवयुवकों से अन्तिम घड़ी में उनका कोई अपना मुलाकात न कर सका।

जेल की निस्तब्ध कोठरियों में बैठे, सूर्यास्त के रक्तिम आकाश को ओर देखते हुये सरदार भगतसिंह, अपने साथियों के साथ गा रहे थे, एक मस्तानी अदा और दर्द भरे स्वर के साथः—

मेरा रंग दे बसन्ती चोला
इसी रङ्ग में रंग के शिवा ने—
माँ के बन्धन खोला ।

उधर काल रात्रि धीरे धीरे अपना अन्धकार फैला रही थी। ठीक ७ बजे सुपरिन्टेन्डेन्ट जेल, पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट और एक मजिस्ट्रेट के साथ विशेष अदालत के लिये बनाये गये कमरे की राह से जेल के अन्दर घुसे। कानूनी हत्या की सब तय्यारियां पूरी हो चुकी थीं, पर जिनके लिए यह सब तय्यारियां हो रही थीं उन अनन्त पथ के पथिकों को इसकी जरा भी खबर न थी ।

लगभग ८ बजे रात्रि को एक पुलिस अफसर के साथ जेलर, मय जेलवार्डर्स के, फांसी की कोठरियों के सामने आ खड़ा हुआ। तीनों नौजवानों को सुनाया गया उन्हें आज रात में ही फांसी पर चढ़ा दिया जायगा। शहीद मुस्करा दिये। कोठरियों का दरवाजा खुला। बहादुर बाहर निकले। जेल वार्डर्स ने हथकड़ियां लगा दीं। कहा गया "फांसी घर चलो"। लोगों ने सुना "इन्क़लाब जिन्दाबाद" "साम्राज्यशाही का नाश हो" के नारे लग रहे हैं। जेल के कैदियों ने आवाज बुलन्द की। वे भी नारे लगाने लगे। इसी प्रकार नारे लगाते तीनों वीर फांसी घर तक पहुँचे। वे बढ़कर फांसी के तख्ते पर चढ़ना ही चाहते थे कि अधिकारियों ने हाथ के इशारे से उन्हें रोक दिया। तीनों वीर पास खड़े भरे हुए हृदय से एक दूसरे को देख रहे थे। उफ़! क्षण भर बाद
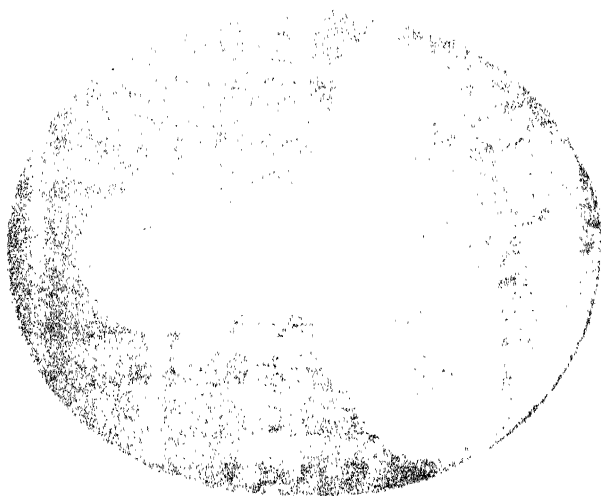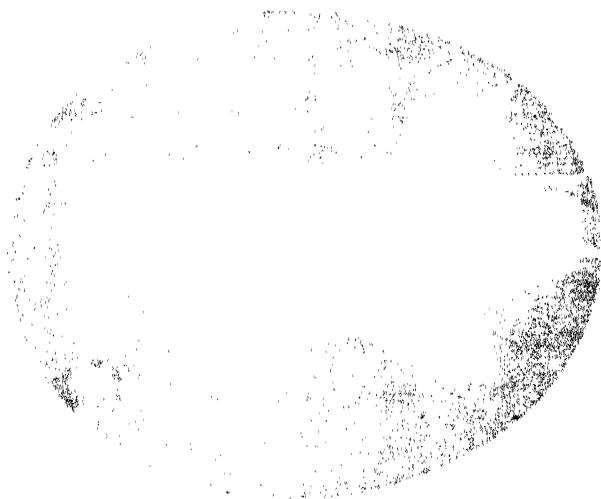
अभिन्न हृदय मित्रों का यह त्रिगुट्ट आज छिन्न भिन्न होने जा रहा है। रुंधे कण्ठ से सुखदेव ने कहा :—

"बस एक मिनट के बाद हम लोग अलग हो जायेंगे। बाद मे फिर मिल कर अपनी पार्टी के कौंसिल की मीटिंग में चलेंगे, वहीं भाई चन्द्रशेखर आजाद, भगवतीचरण, और जतीन्द्रनाथ दास हमारी राह देख रहे होंगे।"

हाथ पीछे करके हथकड़ी डाल दी गई, और सर पर-आंखों के ऊपर से-पहना दिया गया लाल कपड़े का टोप। जज के रूमाल का इशारा हुआ। एक एक बढ़ा और क्षणों में आजादी की बलिवेदी-फांसी के तख्ते-पर-हँसते हँसते अपनी प्राणाञ्जलि चढ़ा, गया "युनियन जैक नीचा हो" का ऊंचा नारा लगाते हुए।

और उनकी लाशें :—

संसारके बड़े से बड़े राष्ट्र से लोहा लेने की डींग मारने वाली साम्राज्यशाही सभ्य (?) ब्रिटिश सरकार को, साहस न हुआ इन तीन नवयुवकों की निर्जीव मिट्टी को उनके सम्बन्धियों को देने का। रातों रात लारियों में रखकर उनकी लाशें सतलज के किनारे पहुँचा दी गईं।

कहा जाता है कि लाशों के टुकड़े करके गढ़े में डाल मिट्टी के तेल से उन्हें फूंका गया। दूसरे दिन सबेरे लोगों ने देखा जिला मजिस्ट्रेट के दस्तखतों से यह नोटिस चिपका हुआ है:—

"सर्व साधारण को सूचित किया जाता है कि कल शाम को भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरू को फांसी दे दी गई तथा इसके

बाद लाश जेल के बाहर ले जाकर सतलज के किनारे भस्म कर दी गई और राख नदी में बहा दी गई।"

बाद में

सारे देश में इस खबर के पहुँचते ही शोक और निराशा की काली घटा छा गई। करांची में कांग्रेस अधिवेशन होने जा रहा था। शान के साथ ३२ घोड़े की बग्घी में राष्ट्रपति का जलूस निकालने का प्रबन्ध था। तमाम धूमधाम बन्द हो गई, सब लोग शोक से व्याकुल हो उठे।

लाहौर शहर तो उस दिन एकदम सुनसान सा मालूम पड़ता था। कुछ अंग्रेजी और मुसलमानी दुकानों के सिवा सारे शहर में हड़ताल थी। शहर में सशस्त्र पुलिस का पहरा था। शहर पर हवाई जहाज मड़रा रहे थे। कॉंग्रेस दफ्तर और पंजाब सेवादल के दफ्तर पर लहराने वाले झन्डे शोक में आधे झुका दिए गए थे। शहर में कई सभायें हुईं। लोग नंगे सर, नंगे पैर काले झंडे लेकर हजारों की तादाद में मौन जलूस में शामिल हुये।

कानपुर की बात कहना तो पके घाव को कुरेदना है। शहर में हड़ताल हो रही थी, किसी स्वार्थी शक्ति के षड़यन्त्र से भीषण हिंदू मुस्लिम दंगा हुवा। पुलिस और फौज तमाशा देखती खड़ी रही आततायियों ने मनमानी की, इसी दंगेमें कानपुर ने अपनी निधि श्री गणेशशंकर जी विद्यार्थीको सदाके लिए खो दिया वे शहीद हो गए। राष्ट्रीय कांग्रेस ने शोक में यह प्रस्ताव पास किया:—

"कांग्रेस यद्यपि किसी भी रूप में राजनैतिक हिंसा के पक्ष में नहीं है परन्तु वह सरदार भगतसिंह, श्री राजगुरु और श्री सुखदेव की वीरता और आत्म बलिदान की प्रशंसा करती है तथा उन के समस्त कुटुम्बियों के साथ अपनी सहानुभूति प्रकट करती है। उसकी राय में ये तीनों फांसियाँ प्रतिहिंसा के भावों से प्रेरित होकर लगाई गई हैं और उनकी फांसी को रद्द करने की राष्ट्रीय मांग की अवलेहना की गई है। काँग्रेस की यह भी राय है कि गवर्नमेंट ने दो राष्ट्रों में मैत्री भाव उत्पन्न करने और विप्लव वादियों की सहानुभूति प्राप्त करने का स्वर्ण अवसर खो दिया है।"

देश के प्रमुख नेताओं ने अपने वक्तव्य प्रकाशित कर के शोक प्रकट किया और देश के तमाम अखबारों ने सरकार के इस कार्य को अनुचित ही बताया।

१६ अप्रैल १६३१ के साप्ताहिक प्रताप में काकोरी षड्यन्त्र केस के राजबन्दी श्री सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य ने "एक नौजवान" के नाम से इन शहीदों को निम्न शब्दों में श्रद्धांजलि अर्पित की थी।

१६ अप्रैल सन् १६३१ 'प्रताप'

सरदार भगतसिंह का बलिदान !!!

[लेखक श्री सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य]

भगतसिंह के रक्त से पंजाब भूमि पवित्र हुई। इसी प्रकार वह एक दिन पवित्र हुई थी जिस दिन गुरू तेग़बहादुर ने अपना रुधिर बहा कर अमरत्व प्राप्त किया था। "कुलम् पवित्रम् जननी कृतार्थी"। भारत की पुण्य भूमि आज भगतसिंह के बलिदान से

कृतकृत्य हुई। धर्म और सत्य की रजत वेदी पर ऐसा अर्घ्य, ऐसी पुष्पाञ्जलि बहुत दिनों से नहीं चढ़ी थी। किसने चढाया ? भगतसिंह तुमने ? हाँ, हाँ, तुम्हीं ने ! झूठ और घनान्धकार पूर्ण इस जीवन में आज द्वादश सूर्यों का प्रकाश कहाँ से हुवा ? अन्ध तिमिर को फाड़ती हुई यह आशा की ज्योति कहाँ से छिटकी ? तुम्हारी जलती हुई अस्थियों से, तुम्हारी चिता के अंगारों से। प्रियतम ! माता के अनन्य भक्त, देश के प्राणाधार, सत्य के एक-निष्ट पुजारी ! क्लेशित और अत्याचार पीड़ित मनुष्य समाज को तुम्हारे इस बलिदान से धीरज बंधा। मालुम हुआ कि दधीच और नचिकेता, सुकरात और गेलिलियो, खुदीराम और सोहनलाल का कुल अभी तक लुप्त नही हुआ। सत्य के नव नव रूप में तुम हमारे बीच में चले आ रहे हो। बलवन्त वीर ! तुम्हें प्रणाम ! क्या हम इस योग्य हैं कि तुम्हें प्रणाम कर सकें ? जिस नाशवान चोले को तुम वेदना, अपमान, बेड़ी हथकड़ी, मार और अनशन से सदा निगृहीत करके अन्त में लात मार कर चले गये। हम उसी जड़ मांस पिंड के गुलाम, वासनाओं के दास, सत्य के प्रकाश से भागने वाले—निर्बल और असहाय—क्या तुम्हारी वन्दना करने के अधिकारी हैं ? पैंतीस करोड़ होते हुए भी हम तुम्हें रख न सके। निर्दय पशु शक्ति ने तुम्हें छीन ही लिया। ओफ़ ! आज तुम्हारी ही चिता की राख पर स्वराज्य के मंगल घट की रचना हो रही है ! स्वराज्य ! क्या मूल्य है उस स्वराज्य का जो तुम्हें न छुड़ा सका ? भगत-

सिंह ! तुम स्वराज्य से कहीं बड़े थे। तरुण भारत तुम्हें खोकर इस छाया-स्वराज्य को कैसे स्वीकार करेगा ?

आज याद आरहा है वह दिन, जिस दिन तुम्हारे प्रथम दर्शन हुए थे। उस दिन पश्चिम दिगन्त से धूसर संध्या की रक्तिम लालिमा, तुम्हारा सुन्दर ललाट और शुभ उष्णीष पर प्रतिफलित हुई थी। हाय सौन्दर्य की वह छवि सदा के लिए इस संसार से मिट गई, अब उसके दर्शन नहीं होंगे।

भगतसिंह ! तुम्हें लोग हिंसा के पुजारी कहते हैं ? फूट की उद्दंडता ! यदि वह हिंसक था तो देश के करोड़ों हृदयों में आज उसने अपने लिए यह ममता कैसे पैदा कर ली ? आज उसके चले जाने से यह गगन भेदी रुदन और हाहाकार क्यों उठ रहा है ? देश अश्रु-प्लावित क्यों हो रहा है ? हमारा श्वास क्यों घुट रहा है ? हृदय सूना और भारत उजड़ा क्यों प्रतीत हो रहा है ? वह हिंसक नहीं था। प्रेम के उस पुतले ने हिंसा का पाठ कभी नहीं पढ़ा था। प्रेम और सहानुभूति का वह अवतार था। वह देश सेवक ही नहीं, सारी मानवता का सेवक था। केवल अपने राष्ट्र से ही प्रेम नहीं करता थो परन्तु विश्व प्रेम में रंगा हुआ था। सत्य और धर्मों का समन्वय करना उसे खूब आता था। आत्म समर्पण उसका मन्त्र था, और निष्काम कर्म उसका मार्ग, इसका वह पथिक था। जाति और राष्ट्र में अमृत रस का संचार करके वह चला गया। हम अज्ञानी हैं, बाल की खाल निकालने वाले हैं, इसी लिए उसे समझ नहीं सके। भगतसिंह हमें तुम क्षमा करना।

हां, वह हिंसक भी था ! झूठ के लिये उस बहादुर सरदार की कृपाण सदा ही उन्मुक्त रहती थी। झूठ और अत्याचार के किले पर ही तो उसने बम फेंका था। जिस किले में हमारी राष्ट्रीयता का गला घोटने और हमारी मनुष्यता को कुचलने की निरन्तर साजिश रची जा रही थी उस किले को उसने हमेशा के लिये ढहा दिया। खूबी थी उसकी चोट में, जो ठीक जगह पर ठीक मौके पर पड़ी। जिस सत्य को देश निर्भीकता से प्रकट करने में हिचक रहा था, उसको भगतसिंह ने बड़ी प्रचंडता से उद्घोषित कर दिया। घड़ी भर में सारे वातावरण को परिवर्तित करके उसने जनता के हृदय पर अपना अधिकार जमा लिया। सत्य की चिनगारी छिपती नहीं, चाहे वह किसी भी रूप में प्रकट हो, उसके प्रकट होने में किसी आडम्बर की आवश्यकता भी नहीं होती है। भगतसिंह के अन्दर जो ओज और सत्य था, देश ने उसे तुरन्त पहिचान लिया। हमारा दुर्भाग्य होगा यदि हम भगतसिंह के सत्य धर्म को न पहचान सकें, यदि हिंसा ही उसका सत्य होता तो भारत कभी न स्वीकार करता। हिंसा और अहिंसा के वह सदा ही परे रहा।

हाय ! हमारी आजादी की लड़ाई अधूरी ही पड़ी रही और वह हमें छोड़ कर चल दिया। "कानून और न्याय" उसकी हस्ती बर्दाश्त न कर सकी। इसी हृदयहीन कानून और न्याय को मथकर आज हम सहृदयता और पूर्ण स्वराज्य पैदा करना चाहते हैं। किसी भी कारण से हो, पर हमारे अन्दर यह

दुराशा जरूर उत्पन्न हो गई है कि हम झुक रहे हैं एक ऐसी शक्ति के सामने, जिसको हमारी हस्ती मिटाने की पूरी लालसा है। परन्तु भगतसिंह ने अपने जीवन में इस कमजोरी को कभी स्वीकार नहीं किया। असत्य और अन्याय उसको कभी न झुका सका। अन्याय अन्त तक उसके लिये अन्याय ही रहा। जीवन का मोह, घर वालों की ममता, संसार का आकर्षण, कोई भी कारण उस महान आत्मा को झुका न सका। अपने शरीर को एक जीर्ण वस्त्र की तरह ही उसने छोड़ दिया, परन्तु प्राणों की भिक्षा नहीं मांगी, मौत की भृकुटी उसे डरा न सकी।

हे मृत्युञ्जय वीर क्या तुम्हारे इस कठिन आदर्श को हम अपना सकेंगे ?

परन्तु वह हमें अपनी शक्ति दे गया। उसकी प्रेरणा की बसन्ती हिलोरों में हमारी राष्ट्रीय आत्मा मस्त होकर झूम रही है। उसकी अस्थियों से जो वज्र उत्पन्न होगा, वह हमारा अमोघ अस्त्र होगा। वह हमारी कायरता का नाश करेगा और बुलन्द करेगा हमारी आजादी का झंडा। भगतसिंह! इस संग्राम में तुम हमसे दूर न रहना। तुम्हारी दृष्टि और तुम्हारी प्रेरणा हमारा साथ न छोड़े। हमारा मार्ग कठिन है और कठिनाइयां हैं अनेक। देखना कहीं हम पथ भ्रष्ट न हो जायं। तुम्हारा देश पर बलिदान हो जाने का, माता के लिये सर्वस्व न्यौछावर कर देने का, आदर्श सदा हमें बल दे और अन्त में संग्राम में विजयी बनावे।

हम इस योग्य नहीं हैं कि तुम्हारी स्मृतियों का उचित सन्मान कर सकें परन्तु हे स्वतन्त्रता के अग्रदूत, स्वतंत्र भारत तुम्हें कभी भूल नहीं सकता क्यों कि तुम्हारी विस्मृति राष्ट्र को विनाश की ओर ही ले जायगी।
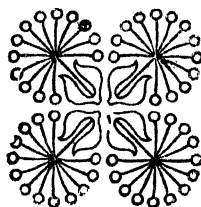
व्यक्तिगत और सार्वजनिक सनसनीदार पत्र

(सरदार भगतसिंह तथा अन्य क्रांतकारी भारत माता की गुलामी की जन्जीर को तलवार के बल से काटने का विश्वास रखने वाले केवल लाल क्रांति के योद्धा ही न थे, एवं राजनीति के दांव पेंच जानने वाले चतुर राजनीतिज्ञ भी थे। जब कांग्रेस और वायसराय में समझौते की बात शुरू हुई थी तो सरदार भगतसिंह ने वर्तमान राजनीतिक परिस्थित पर अपने विचार प्रकट करते हुए देश के नौजवान राजनैतिक कार्यकर्ताओं के नाम जेल से एक सन्देश भेजा था। साथ ही श्री सुखदेव ने भी एक लंबा पत्र महात्मा जी के पास भेजा था। इन पत्रों की अनेक बातों से सहमत न होते हुये भी, उन्हे इस लिये प्रकाशित किया गया है कि राजनीतिक बातों की किस तह तक वे पहुंचते थे।)

सरदार का अँतिम सन्देश

क्राँतिकारियों के नाम

प्यारे साथियो।

इससमय हमारा आंदोलन अत्यन्त महत्वपूर्ण परिस्थितियों में से गुजर रहा है। एक साल के कठोर संग्राम के बाद गोलमेज कान्फरेंस ने हमारे सामने शासन विधान में परिवर्तन के समय में कुछ निश्चित बातें पेश की हैं और कांग्रेस के नेताओं को निमन्त्रण दिया है कि वे आकर शासन विधान तैयार करने के काम में मदद दें। कांग्रेस के नेता इस हालत में आंदोलन को स्थगित

कर देने के लिये उद्यत दिखाई देते हैं। वे लोग आंदोलन स्थगित करने के हक़ में फैसला करेंगे या इसके खिलाफ यह बात हमारे लिए महत्व नहीं रखती। यह बात निश्चित है कि वर्तमान आंदोलन का अन्त किसी न किसी प्रकार के समझौते के रूप में होना लाज़मी है। यह दूसरी बात है कि समझौता जल्दी हो जाय या देर में हो।

समझौता क्या है

वस्तुतः समझौता कोई ऐसी हेय और निन्दा योग्य वस्तु नहीं है. जैसा कि साधारणतः हम लोग समझते हैं। बल्कि राजनीतिक संग्रामों का समझौता एक आवश्यक अंग है। कोई भी कौम जो किसी अत्याचारी शासन के विरुद्ध खड़ी होती है, यह जरूरी है कि वह प्रारम्भ में असफल हो, और अपनी लंबी जद्दोजहद के मध्यकाल में इस प्रकार के समझौतों के ज़रिये कुछ राजनीतिक सुधार हासिल करती जाय परन्तु वह अपनी चढ़ाई की आखिरी मंजिल तक पहुचते २ अपनी ताक़तों को इतना संगठित और दृढ़ कर लेती है कि उसका दुश्मन पर आखिरी हमला ऐसा जोरदार होता है कि शासक लोगों की ताकतें उनके उस वार के सामने चकनाचूर होकर गिर पड़ती हैं। ऐसा भी हो सकता है कि उस वक़ उसे दुश्मन के साथ कोई समझौता कर लेना पड़े। यह बात रूस के उदाहरण से भली भांति स्पष्ट की जा सकती है।

१६०५ में क्रांति की लहर उठी। क्रांतिकारी नेताओं को बड़ी भारी आशायें थीं। लेनिन उसी समय विदेश से लौ

आया था। जहां वह पहले भागकर चलागया औरसारे आन्दोलन को चला रहा था। लोगों ने कोई दर्जन भर भूमिपतियों को मार डाला, और कुछ मकानों को जला डाला। परन्तु वह क्राँति सफल न हुई। उसका इतना परिणाम अवश्य हुआ कि सरकार कुछ सुधार करने के लिए बाधित हुई, और 'ड्यूमा' (एक प्रकार की पार्लमेंट) की स्थापना की गयी। उस समय लेनिनने 'ड्यूमा' में जाने का समर्थन किया। पर १६०६ में उसी का उसने विरोध शुरू कर दिया। परन्तु १६०७ में उसने दूसरी 'ड्यूमा' में जाने का समर्थन किया जिसके अधिकार बहुत कम कर दिये गए थे। इसका कारण यह था कि वह 'ड्यूमा' को अपने आन्दोलन का एक 'प्लेटफार्म' बनाना चाहते थे।

इसी प्रकार १६१७ के बाद जब जर्मनी के साथ रूसकी सन्धि का प्रश्न चला तो लेनिन के सिवा बाक़ी सभी लोग उस सन्धि के खिलाफ़ थे। परन्तु लेनिन ने कहा। 'शान्ति, शाँति और फ़िर शाँति' किसी भी क़ीमत पर हो शाँति। यहाँ तक कि यदि हमें रूस के कुछ प्रान्त भी जर्मनी के 'वार लार्ड' को सौंप देने पड़ें तो भी शाँति कर लेनी चाहिए।' जब कुछ बाल्शेविक नेताओं ने भी उसकी इस नीति का विरोध किया तो उसने साफ़ कहा कि "इस समय बाल्शेविक सरकार जर्मनी का मुक़ाबला करने में असमर्थ है, और इस समय हमारा पहला काम लड़ाई से बच कर अपनी सरकार को मज़बूत करना है।"

जिस बात को मैं बताना चाहता हूं वह यह है कि 'समझौता

भी एक ऐसा हथियार है जिसे राजनैतिक जद्दोजहद के बीच में पद पद पर इस्तेमाल करना आवश्यक हो जाता है जिससे एक कठिन लड़ाई से थकी हुई क़ौम को थोड़ी देर के लिये आराम मिल सके, और वह आगे युद्ध के लिए अधिक ताकत के साथ तैयार हो सके। परन्तु इन सारे समझौते के बावजूद जिस चीज को हमें भूलना न चाहिये वह हमारा आदर्श है जो हमेशा हमारे सामने रहना चाहिए। जिस लक्ष्य के लिए हम लड़ रहे हैं उस के संबंध में हमारे विचार बिलकुल स्पष्ट और दृढ़ होने चाहिए। यदि आप सोलह आना के लिये लड़ रहे हैं, और एक आना मिल जाता है तो वह एक आना जेब में डाल कर बाकी पन्द्रह आने के लिए फिर जंग छेड़ दीजिए। हिन्दुस्तान के माडरेटों की जिस बात से हमें नफरत है वह यही है कि उनका आदर्श कुछ नहीं। वे एक आने के लिए ही लड़ते हैं और उन्हें इसी लिये मिलता कुछ भी नहीं।

कांग्रेस का उद्देश्य क्या है ?

इसके आगे सरदार जी ने अपने पत्र में इस बात की आलोचना को है कि भारतकी वर्तमान लड़ाई ज्यादातर मध्यश्रेणी के लोगों के बलबूते पर लड़ी जा रही है। जिसका लक्ष्य बहुत सीमिति है। कांग्रेस दुकानदारों और पूंजीपतियों के ज़रिये इंग्लैंड पर अधिक दबाव डालकर कुछ अधिकार ले लेना चाहती है, परन्तु जहां तक देश की करोड़ों मजदूर और किसान जनता का ताल्लुक़ है, उनका उद्धार इतने से नहीं हो सकता। यदि देशको

लड़ाई लड़ानी हो तो मजदूरों, किसानों और सामान्य जतना को आगे लाना होगा, उन्हें लड़ाई के लिए संगठित करना होगा। नेता उन्हें अभी तक आगे लाने के लिये कुछ नहीं कर सके हैं। इन किसानों को विदेशी हकूमत के जुए के साथ साथ भूमिपतियों और पूंजीपतियों के जुए से भी उद्धार पाना है। परन्तु कांग्रेस का उद्देश्य यह नहीं है।

"इसलिए मैं कहता हूं कि कांग्रेस के लोग सम्पूर्ण क्रान्ति नहीं चाहते। सरकार पर आर्थिक दबाव डाल कर वे कुछ सुधार लेना चाहते हैं भारत की धनी श्रेणी के लिये कुछ रियायतें और करा लेना चाहते हैं, इसी लिए मैं यह भी कहता हूं कि कांग्रेस का आन्दोलन किसी न किसी समझौते या असफलता के रूप में खतम हो जायगा।"

नौजवानों का फर्ज

"इस हालत में नौजवानों को समझ लेना चाहिये कि उनके लिए वक्त और भी सख्त आ रहा है उनको सावधान हो जाना चाहिये कि उनकी बुद्धि चकरा न जाय, या वे हड़ताल न करबैठे। महात्मा गान्धी की दो लड़ाइयों का अनुभव प्राप्त कर लेने के बाद वर्तमान हालत और अपने भविष्य प्रोग्रामके सम्बन्ध मेंसाफ साफ निर्धारित करना हमारे लिये अब ज्यादा जरूरी होगया है।

क्राँति चिरजीवी की पुकार

"इतना विचार कर चुकने के बाद मैं अपनी बात अत्यन्त सादे शब्दों कहता हूं।

आप लोग "क्रान्ति चिरंजी" हो"(Long live Revoloti on) की पुकार करते हैं। यह नारा बहुत ही पवित्र है, और इसका इस्तेमाल हमें बहुत ही सोच समझ कर करना चाहिये।

हमारा लक्ष्य

जब आप नारे लगाते हैं तो मैं समझता हूं कि आप लोग वस्तुतः जो पुकारते हैं वही करना भी चाहते हैं। असेम्बली-बम केस के समय हमने क्रांति शब्द की व्याख्या की थी। 'क्रान्ति' से हमारा अभिप्राय समाज की वर्तमान प्रणाली और वर्तमान संगठन को पूरी तरह उखाड़ फेंकना है। इस उद्देश्य के लिए हम पहले सरकार की ताक़त को अपने हाथ में लेना चाहते हैं। इस समय शासन की मशीन धनियों के हाथ में है। सामान्य जनता के हितों की रक्षा के लिये तथा अपने आदर्शों को क्रियात्मक रूप देने के लिये अर्थात् समाज का नये सिरे से संगठन कार्लमार्क्स के सिद्धान्तों के अनुसार करने के लिये हम सरकार की मशीन को अपने हाथ में लेना चाहते हैं। इसी उद्देश्य के लिये हम लड़ रहे हैं। परन्तु इसके लिये हमें साधारण जनता को शिक्षित करना चाहिये।"

शास विधान की कसौटी

जिन लोगों के सामने इस महान क्रांति का लक्ष्य है, उनके लिये नये शासनसुधारों की कसौटी क्या होनी चाहिये इस पर विचार करते हुए उन्होंने लिखा है।

"हमारे लिये निम्नलिखित तीन बातेंकिसी भी शासन विधान की परख के लिये देखना जरूरी है—

१—शासन की जिम्मेवारी कहां तक भारतवासियों के सुपुर्द की जाती है।

२—शासन विधान को चलाने के लिये किस प्रकार की सरकार बनाई जाती है, और उसमें हिस्सा लेने का आम जनता को कहां तक मौका मिलता है।

३–भविष्य में उससे क्या आशाएं की जा सकती हैं। उस पर कहां तक प्रतिबन्ध लगाये जाते हैं।" इस सिलसिले में उन्हों ने सर्व साधारण को वोट देने का हक़ देने का समर्थन किया है।

पार्लमेन्ट के दो हाउसों के सम्बन्ध में विचार करते हुए लिखा है कि क्योंकि भारत सरकार की "कौंसिल आफ़ स्टेट' सिर्फ धनियों का जमघट है, और लोगों को फांसने का एक पिंजरा है इस लिये उसे हटाकर एक ही सभा—जिसमें जनता के प्रतिनिधि हों रखनी चाहिए।

'प्राँतीय स्वराज्य' या 'प्राँतीय ज़ुल्म' ?

"प्रांतीय स्वराज्य" का जो निश्चय गोलमेज कान्फ्रेंस में हुआ है उसके सम्बन्ध में विचार करते हुए लिखा है कि जिस प्रकार के लोगों को वहां सारी ताक़तें दी जा रही हैं उससे तो वह "प्रांतीय स्वराज्य" न होकर "प्रांतीय ज़ुल्म" हो जायगा।

"इन सब अवस्थाओं पर विचार करके हम इस परिणाम

पर पहुँचे हैं कि सब से पहले हमें सारी अवस्थाओं का चित्र साफ़ तौर पर अपने सामने अंकित कर लेना चाहिये। यद्यपि हम यह मानते हैं कि समझौते का अर्थ कभी आत्मसमर्पण या पराजय स्वीकार करना नहीं, किन्तु एक कदम आगे बढ़ना और फिर कुछ आराम है। परन्तु साथ ही हमें यह भी समझ लेना चाहिए, कि समझौता इससे अधिक भी और कुछ नहीं। वह अन्तिम लक्ष्य और हमारे लिए अन्तिम विश्राम का स्थान नहीं।"

इसके बाद उन्होंने अपने दल के लक्ष्य, और साधनों पर विचार किया है। दल का नाम सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी है, और इस लिये इसका लक्ष्य एक सोशलिस्ट या कम्यूनिस्ट सामाजिक संगठन की स्थापना है। कांग्रेस और इस दल के लक्ष्य में यही भेद है कि जहाँ राजनीतिक क्रान्ति से शासन शक्ति अंग्रेजों के हाथों से निकल कर हिन्दुस्तानियों के हाथों में आजायगी उसका लक्ष्य हमारी शासन शक्ति को उन हाथों के सुपुर्द करना है जिनका लक्ष्य कम्यूनिज्म हो। इसके लिये मजदूरों और किसानों का संगठित करना आवश्यक होगा क्योंकि उन लोगों के लिये लार्डरीडिंग या इरविन की जगह तेजबहादुर या पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास के आजाने से कोई भारी फरक न पड़ सकेगा।

पूर्ण स्वाधीनता

पूर्ण स्वाधीनता से भी इस दल का यही अभिप्राय है। जब लाहौर कांग्रेस ने पूर्ण स्वाधीनता का प्रस्ताव पास किया तो हम

लोग पूरे दिल से इसे चाहते थे, परन्तु कांग्रेस के उसी अधि-वेशन में महात्मा जी ने कहा कि समझौते का दरवाजा अभी भी खुला है। इसका अर्थ यह था कि वह पहले से जानते थे कि उनकी लड़ाई का अन्त किसी इसी प्रकार के समझौते में होगा। वे पूरे दिल से स्वाधीनता की घोषणा नहीं कर रहे थे। हम लोग इसी बेदिली से घृणा करते हैं।

कार्यकर्त्ताओं की आवश्यकता

नेता बनने वाले पहले ही बहुत हैं। हमारे दल को नेताओं की आवश्यकता नहीं है। अगर आप दुनियांदार हैं, बाल बच्चों और गृहस्थी में फंसे हैं, तो हमारे मार्ग पर मत आइये। आप हमारे उद्देश्य में सहानुभूति रखते हैं तो और तरीकों से हमें सहायता दीजिए। सख्त नियन्त्रण में रह सकने वाले कार्यकर्ता ही इस आन्दोलन को आगे लेजा सकते हैं। जरूरी नहीं कि दल इस उद्देश्य के लिए छिप कर ही काम करे। हमें युवकों के लिए 'स्वाध्याय मण्डल' (Study circle) खोलने चाहिए। पैम्फलेटों और लीफलेटों, छोटी पुस्तकों, छोटे छोटे पुस्तकालयों और लैक्चरों बात चीत आदि से हमें अपने विचारों का सर्वत्र प्रचार करना चाहिए।

सैनिक विभाग

हमारे दल का एक सैनिक विभाग भी संगठित होना चाहिए, कभी कभी इसकी बड़ी जरूरत पड़ जाती है। इस सम्बन्ध में मैं

अपनी स्थिति ज्यादा साफ कर देना चाहता हूं। मैं जो कुछ कहना चाहता हूं उसमें गलतफहमी की सम्भावना है। परन्तु आप लोग मेरे शब्दों और वाक्यों का कोई गूढ़ अभिप्राय न ढूंढें।

यह बात प्रसिद्ध ही है कि मैं आतंककारी (Terrorist) रहा हूं परन्तु मैं आतंककारी नहीं हूं। मैं एक क्रांतिकारी (Revolutionary) हूं जिसका कुछ निश्चित विचार और निश्चित आदर्श है—जिसके लिए लम्बा प्रोग्राम है। मुझे यह दोष दिया जायगा जैसा कि लोग रामप्रसाद बिस्मिल को भी देते थे, कि फांसी की काल कोठरी में पड़े रहने से मेरे विचारों में भी कोई परिवर्तन आ गया है। परन्तु ऐसी बात नहीं। मेरे विचार अब भी वही हैं, मेरे हृदय में अब भी उतना ही और वही लक्ष्य है जो जेल से बाहर था। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि हम बम और पिस्तौल के उपायों से कोई लाभ प्राप्त नहीं कर सकते। यह बात हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी के इतिहास से आसानी से मालूम हो जाती है। केवल बम फेंकना न सिर्फ व्यर्थ है, परन्तु बहुत बार हानिकारक भी है। उस की आवश्यकता किन्ही खास अवस्थाओं में ही पड़ा करतीहै हमारा मुख्य लक्ष्य मजदूरों और किसानों का संगठन होना चाहिए। सैनिक विभाग युद्ध सामग्री को किसी खास मौके के लिए केवल संग्रहकरता रहे। यदि वह इसी प्रकार प्रयत्न करते जांयगे तब जाकर एक साल में स्वराज्य तो नहीं किन्तु भारी

कुर्बानी और त्याग की कठिन परीक्षा में से गुजरने के बाद वे अवश्य विजयी होंगे। "क्रान्ति चिरजीवी हो।"

अपने एक मित्र के नाम

सरदार भगतसिंह का पत्र

सरदार भगतसिंह ने गत नवम्बर मास की २६ तारीख को निम्नलिखित पत्र अपने एक मित्र के नाम लिखा था: —

प्यारे भाई !

मैंने आपका पत्र ध्यानपूर्वक पढ़ा। मैं अनुभव करता हूं कि समय तथा परिस्थिति दोनों ने हम पर जुदा जुदा प्रभाव डाला है। वही बातें हैं जिनसे आप बाहर घृणा किया करते थे और अब आप उनके वगैर रह नहीं सकते। जिन बातों को बाहर मैं महत्वपूर्ण समझता था वे अब कुछ मूल्य नहीं रखतीं। जैसे मैं व्यक्तिगत प्रेम का कट्टर पोषक था, परन्तु अब मैं उसका इतना समर्थक नहीं हूं। बाहर आप इसका विरोध किया करते थे, परन्तु अब आप इसे अनुभव करते हैं।

आत्मघात

आपको याद होगा एक बार हम दोनों में आत्मघात के सम्बन्ध में विवाद छिड़ा था। मैंने कहा था कि कुछ हालतों में इसे उचित माना जा सकता है, परन्तु आपने इसको भारी विरोध किया था। आपने कहा था कि यह भीरुता है और भीषण कर्म

है परन्तु आज आप इसे जरूरी समझते हैं। मेरा विचार इस प्रकार है।

सेवा और त्याग

आत्मघात एक भीषण काण्ड है और परले दरजे की भीरुता है। क्रान्तिकारी तो क्या इसे कोई भी आदमी उचित नहीं कहेगा। आप जानते हैं हम नौजवान भारत सभा के आदर्श वाक्यों का कितना मान करते थे। सेवा करना सहिष्णुता और त्याग करना हमारा लक्ष्य था मैं मानता हूं आप जितनी सेवा कर सके वह की अब समय है कि हमने जो कुछ किया है उस के लिए कष्ट सहें। वह दूसरा दर्जा है। एक आदमी एक काम को उचित समझ कर करता है जैसा कि हमने एसेम्बली में बम फेंका था क्या आप समझते हैं कि दुखों से बचने के लिए दया की भिक्षा मांगना हमारे लिए श्रेयस्कर था। कदापि नही इसका और भी बुरा प्रभाव पड़ता। अब हम अपने कार्य में सफल हैं। अर्थात अब हम अपनी बलि देने को तैयार हैं। हमसे जिनको यह आशा है कि उन्हें प्राणदण्ड की आज्ञा मिलेगी वे इसकी बाट जोहें। यह मौत भी शानदार होगी परन्तु दुखों से बचने के लिए आत्मघात करना केवल भीरुता है। मैं यह कहूंगा कि दुख मनुष्य को सफलता की ओर ले जाते हैं।

रूस और भारतवर्ष

हमने कई बार इस पर विचार किया कि रूस के साहित्य में जो गांभीर्य है, वह भारत के साहित्य में नही। उनकी कथाओं में

जो दर्द है हम उसे पसन्द करते हैं। परन्तु उसे अनुभव नहीं करते। कारण ? हम उनके चरित्रों को सराहते हैं, परन्तु कारण देखने की परवाह नहीं करते। मैं आपको बताऊँगा वह कष्ट सहिष्णुता ही थी जिसमे इनके चरित्र और साहित्य में दर्द उत्पन्न हुआ। हमारी स्थिति दयाजनक है। हम विचारों को जीवन में, प्राकृतिक और सुदृढ नीवों के बिना ही पालना चाहते हैं। केवल जेलों में यह अवसर मिलता है कि अपराध जैसे सामाजिक दोष पर विचार किया जा सके। इस विचार और स्वध्याय का सर्वोत्तम साधन है व्यक्तिगत तकलीफें। आप जानते हैं कि रूस में इन राजनीतिक कैदियों के कष्ट ही थे जिस से वहाँ के साहित्य में और जेल व्यवस्था में परिवर्तन आया। क्या भारत को ऐसे आदमियों की जरूरत नहीं जो इस प्रकार व्यक्तिगत अनुभव रखते हों। मैं कहता हूँ कि मार्कस ने साम्य-वाद की बुनियाद नहीं रखी। यूरोप की यह शिल्प सम्बन्धी क्रांति थी जिसने एक विशेष प्रकार के सोचने वाले आदमी—मार्कस—को पैदा किया। अपितु यह समय का प्रभाव था। जब हमने एक भारी काम आरम्भ किया तो उसे चालू रखना चाहिये। आप कहते हैं कि जेल के १४ वर्षीय जीवन के बाद क्या एक आदमी से यह आशा की जा सकती है कि वह उन्हीं विचारों का पोषक हो जिनका वह जेल जाने से पूर्व था। मैं पूछता हूँ कि क्या बाहर का वातावरण हमारे अनुकूल था। क्या हमने

नाकामी और निराशा की स्थिति में काम नहीं किया ? यदि लेनिन आपकी तरह सोचता तो प्रारम्भ में ही आत्मघात कर जाता। आज आप देखते हैं कि असंख्य क्रान्तिकारी जिन्होंने अपने जीवन का बहुत बड़ा भाग निर्वासन अथवा जेल की काल-कोठरियों में काटा, अपने२ देशों में जिम्मेदार पदों पर काम कर रहे हैं। दूसरी बात जिसकी ओर मैं आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं वह यह है कि हम लोगों को—जिनका ईश्वर, आवा गमन, नर्क स्वर्ग आदि पर कोई विश्वास नहीं—जीवन और मौत के मामले में साफ साफ होना चाहिये। मैं आज कल अपने सम्बन्ध में क्या सोचता हूं यह भी आपको बता दूं ! मुझे प्राण दन्ड का पूर्ण विश्वास है। वास्तव में मुझे किसी क्षमा की आशा नहीं। सम्भव है पूर्ण और आम मुआफी न हो और यह भी सम्भव है कि वह बाद में परिमित करदी जांय। परन्तु हमारे लिये वह मुआफी न होगी और न हो सकती है। मैं चाहता हूं कि हमारी रिहाई की मांग देश व्यापी हो और मैं यह भी चाहता हूं, कि इसी आन्दोलन युग में हमें फांसी पर चढा दिया जाय। यद्यपि मेरी इच्छा है कि हमारी तरह व्यक्तिगत प्रश्न किसी न्याय पूर्ण समझौते में बाधक न हो, यदि ऐसा समझौता सम्भव हो तो व्यक्तियों को उस पर निछावर किया जा सकता है। मैं अपने गत अनुभव से कह सकता हूं कि हमारे शासकों में ऐसा परिवर्तन आना सम्भव नहीं।

फांसी से पहिले

सरकार के नाम पत्र

यह पत्र फांसी दिये जाने के कुछ दिन पहले लाहौर सेन्ट्रल जेल के सुप्रिन्टेडेन्ट की मार्फत पंजाब के गर्वनर को भेजा जाता था।

"उचित सम्मान के साथ हम नीचे लिखी बातें आपकी सेवा में उपस्थित करना चाहते हैं:——

"हम लोगों को १६३० की ७ वीं अक्टूबर को उस अंगरेजी अदालत अर्थात स्पेशल ट्रिब्यूनल ने फांसी की सजा दी थी, जो भारत में अंगरेजी शासन के प्रधान, वायसराय द्वारा जारी किये हुये "स्पेशल लाहौर कोन्सपिरेसी केस आर्डिनेन्स" के अनुसार नियुक्त हुवा था। हम लोगों के विरुद्ध प्रधान अभियोग महाराज पंचम जार्ज, याने इंगलेड के महाराज के विरुद्ध युद्ध करने का लगाया गया था। उक्त अदालत के फैसले से दो बातें निश्चित हो जाती हैं पहले यह कि अंगरेज राष्ट्र और भारतीय राष्ट्र के बीच युद्ध की अवस्था उपस्थित है और दूसरी यह कि हम लोगों ने वास्तव में उस युद्ध में भाग लिया था, जिससे हम युद्ध के कैदी हैं।

दूसरी बात कुछ आत्मश्लाधा सी जान पड़ती है, मगर फिर भी हम इसे स्वीकार करने ही की नहीं, बल्कि इसके लिये अपने को महान प्रतिष्ठा प्राप्त समझने की अपनी इच्छा को दबा नहीं

सकते। पहली के बारे में हम कुछ विस्तार में जाने को मजबूर हैं। उक्त वाक्य से जैसा जाहिर होता है वैसा युद्ध प्रत्यक्ष दिखाई नहीं देता है। हम नहीं जानते कि युद्ध करने का अर्थ अदालत ने क्या लगाया, पर हम उसे सच्चे मानी में स्वीकार करना चाहते हैं। पर अपने विचार साफ़ करने के लिये कुछ विस्तृत व्याख्या की आवश्यकता जान पड़ती है।

युद्ध जारी है

"हम कहना चाहते हैं, कि युद्ध छिड़ा हुवा है और यह तब तक जारी रहेगा, जब तक मुट्ठी भर शक्तिशाली लोगों ने मिहनत मजदूरी करने वाले भारतीयों और जन साधारण के प्राकृतिक साधनों पर अपने स्वार्थ साधन के लिये अधिकार जमा रक्खा है। इस प्रकार स्वार्थ साधने वाले चाहे अंग्रेज पूंजीपति हों या हिंदुस्तानी, उन्होंने आपस में मिलकर लूट जारी कर रक्खी हो या शुद्ध भारतीय पूंजी से ही ग़रीबों का खून चूसा जा रहा हो, इन बातों से अवस्था में कोई अन्तर नहीं आता। कुछ चिन्ता नहीं, यदि आप की सरकार नेताओं व भारतीय समाज के चौधरियों को थोड़ी सी सुविधायें देकर अपनी ओर मिलाने में सफल हो जाय और समझौता हो जाय। किन्तु जन-साधारण पर इसका बहुत कम असर पड़ता है। इसकी कुछ परवाह नहीं अगर एक बार फिर नौजवानों से विश्वासघात किया गया है, इस बात का भी दुःख नहीं, अगर हमारे राजनीतिक [illegible] गये हैं और वे युद्ध की बातचीत

में उन बे घरबार और गरीब देवियों को भूल गये हैं जो दुर्भाग्यवश क्रांतिकारी दल की सदस्य समझी जाती हैं, और हमारे राजनीतिज्ञ उन्हें अलग अपना दुश्मन समझते हैं, क्योंकि उनके विचार में वे "हिंसा में विश्वास रखती हैं। निस्सन्देह इन वीर देवियों ने अपना सब कुछ बलिदान कर दिया है। उन्होंने अपने पतियों को बलिदान किया, और बलिदान के लिये पेश किया। अपने भाइयों का भेंट चढ़ा दिया, और भी जो कुछ था उनके पास, निछावर कर दिया। यही नहीं अपने आप को भी निछावर कर दिया। लेकिन आपको सरकार उन्हें बागी ख्याल करती है। आपके एजेन्ट झूठी कहानियां गढ़ २ के भले ही उन्हें और पार्टी को बदनाम करें पर राष्ट्र का युद्ध जारी रहेगा।

युद्ध के भिन्न भिन्न रूप

"हो सकता है कि युद्ध समयानुसार अपना रूप बदल दे। कभी वह खुला रूप ले सकता है और कभी हो सकता है छिपे रूप में। कभी हलचल मचाने वाले आन्दोलनों का रूप धारण कर सकता है और कभी कभी भयंकर रूप धारण करके जीवन मरण का दृश्य उपस्थित कर सकता है। यह युद्ध चाहे भी जिस रूप में हो, उसका प्रभाव सरकार पर पड़ेगा। यह आपकी इच्छा है कि आप उसका चाहे जो रूप पसन्द करें, पर यह युद्ध तो जारी ही रहेगा। छोटी २ बातों की इसमें परवाह न की जायगी। बहुत मुमकिन है कि यह

युद्ध भीषण रूप धारण करले। नये उत्साह, बढ़ी हुई दृढ़ता और अटल स्थिरता पूर्वक यह युद्ध तब तक चलता रहेगा, जब तक साम्यवादी प्रजातंत्र की स्थापना नहीं हो जाती और वर्तमानसमाज के स्थान में नये सिरे से समाज का ऐसा संगठन नहीं हो जाता, जिससे शोषण करने वालों का शोषण करना बन्द हो जाय और समाज एवं मानव जाति को सच्ची शान्ति मिले।

अंतिम युद्ध

"बहुत जल्द आखिरी लड़ाई छिड़ेगी और उसमें आखिरी फैसला हो जायगा। साम्राज्यवाद और पूंजीवाद, अब थोड़े ही दिनों के मेहमान और हैं। यही युद्ध है जिसमें हमने खुलकर भाग लिया है और इसके लिये हमें गर्व है। यह युद्ध न तो हमने शुरू ही किया है और न वह हमारे जीवन के साथ समाप्त ही होगा। यह तो ऐतिहासिक घटनाओं और वर्तमान समाज के परिणाम स्वरूप है. हमारा बलिदान तो इतिहास के उस अध्याय में वृद्धि करने वाला होगा, जिसे हमारे जतीन्द्रदास और कामरेड भगवती चरण के अद्वितीय बलिदानों ने प्रकाशमान बना दिया है। अब रही अपनी बात, सो हम इस विषय में इतना ही कहेंगे कि, जब आपने हमें फांसी पर लटकाने का निश्चय ही कर लिया है, तो आप ऐसा करेंगे। आप के हाथों में शक्ति है और आप को अधिकार प्राप्त है, लेकिन हमयह कहना चाहते हैं कि, "जिसकी लाठी उसकी भैंस" का सिद्धांत आपके सामने रहा है और आप

उसी के अनुसार काम कर रहे हैं। इस कथन को साबित करने के लिये हमारे मुकदमे की कार्यवाही ही काफ़ी है, हमने कभी प्रार्थना नहीं की और न हम किसी से दया भिक्षा मांगते हैं और न उसकी आशा ही रखते हैं। हम केवल यही बताना चाहते हैं कि आप की अदालत के निर्णय के अनुसार हम युद्ध में प्रवृत्त रहे हैं और इस लिये लड़ाई के कैदी हैं, इसीसे हम चाहते हैं कि हमारे साथ वैसा ही बर्ताव किया जाय अर्थात् हमारा दावा है कि हमें फांसी न देकर गोली से उड़ा देना चाहिये। जब यह सिद्ध करना आप के हाथ में है कि, आप गम्भीरता पूर्वक वैसे ही समझते हैं, जैसा कि आपकी अदालत ने कहा है और इसे कार्य द्वारा सिद्ध करें।

हम बड़ी उत्सुकता से आप से निवेदन करते और आशा करते हैं कि, आप बहुत कृपा करके सेना-विभाग को हुक्म देंगे कि हमें प्राण दंड देने को वह एक सैनिक दस्ता या गोली मारने वालों की टुकड़ी भेजें, आशा है कि आप हमारी बात स्वीकार करेंगे, जिसके लिये हम आप को पहले ही से धन्यावाद दे देना चाहते हैं।"

हम हैं आप के पूर्ण आज्ञाकारी सेवक

भगतसिंह

शिवराम राजगुरू

भाई के नाम पत्र

भाई को मातम न मनाने का आदेश

सेन्ट्रल जेल लाहौर से सरदार भगतसिंह ने अपने छोटे भाई के नाम जो अन्तिम पत्र लिखा था वह इस प्रकार है।

प्यारे कुलतारसिंह !

आज तुम्हारी आंखों में आंसू देख कर बहुत रंज हुआ। आज तुम्हारी बातों में बहुत दर्द था। तुम्हारे आंसू मुझसे बर्दाश्त न हुए। प्यारे भाई हिम्मत से तालीम हासिल करते जाना और सेहत का ख्याल रखना। और क्या लिखूं, हौसल रखना, सुनोः—

उन्हें यह फिक्र है हर दम नई तर्जे जफा क्या है,
हमें यह शौक है देखें सितम को इन्तहा क्या है ।।
दहर से क्यों खफा रहें, चर्ख का क्यों गिला करें,
सारा जहां अदू सही आओ मुकाबला करें ।।
कोई दम का मेहमान हूं अहले महफिल,
चिरागे सेहर हूं, बुझा चाहता हूं ।।
आबोहवा में रहेगी, ख्याल की बिजली।
ये मुश्ते खाक है फानी—रहे रहे न रहे ।।
अच्छा, खुश रहो अहले वतन हम तो सफर करते है।

आनन्द से रहना।

तुम्हारा भाई—भगतसिंह

यह पत्र सलेम जेल से वीर बटुकेश्वर दत्त द्वारा सरदार भगतसिंह के पिता सरदार किशनसिंह को लिखा गया था।

बटुकेश्वरदत्त का पत्र

सरदार जी,

मेरे जीवन में यह पहला ही अवसर है कि, मैं आपको पत्र लिख रहा हूं। लेकिन इस नाजुक मौके पर जब मेरे प्यारे कामरेड सरदार भगतसिंह की किस्मत का फैसला होने वाला है, यह बहुत ही कठिन मालूम पड़ता है कि, मैं इस चिट्ठी को किस तरह शुरू करूं। तो भी अवस्था मुझे शब्द लिखने को लाचार करती है अगर आपके दिल को इस से कुछ रंज पहुँचे तो मैं आशा करता हूं, कि आप मुझे इसके लिए क्षमा करेंगे। सरदार जी, यह तो आप अच्छी तरह जानते हैं कि मेरा भगतसिंह से क्या सम्बन्ध है। यह सम्बन्ध भ्रातृ-भाव के प्रेम और मित्रता का है, जिसे मानव-जाति के कल्याण के क्षेत्र में हमारे सम्मिलित दायित्व ने और भी मजबूत कर दिया है। प्रेम का यह श्रोत मेरे हृदय में उमड़ रहा है और इसने मुझे लाचार कर दिया है कि मैं उच्च अफसरों से यह प्रार्थना करूं, कि यदि मेरा भाग्य साथ नहीं देता कि अपने उन मित्रों का, जिन के ऊपर काली घटायें घिर रहीं हैं, अन्त तक साथ दे सकूं तो मुझे कम से कम इतना मौका दे दिया जाय, कि मैं उनका आखिरी दर्शन कर सकूं, और इस अवसर पर अपने प्रेम भाव का परिचय दे सकूं, और सदा के लिए एक दूसरे से पृथक होने के

पहले हम एक-दूसरे का अभिवादन कर सकें। लेकिन मुझे बहुत अफसोस है कि अफसरों ने एक ऐसे आदमी के भाव की पर्वाह नहीं की, जिसे अपने प्यारे मित्र के शोकजनक वियोग के बाद जेल की चहार दिवारी के भीतर ज़िन्दा ही गड़ जाना है। सरदार से मिलने की मेरी प्रार्थना अस्वीकार कर दी गई। और क्या लिखूं? यदि संभव हो तो मेरे ये भाव मेरे साथी सरदार तक पहुँचा दें। मैं अनुभव करता हुं :—

आज़माइश है कड़ी,
लब पर कोई शिकवा न हो।
फिर मिलेंगे जायकीं,
दिल में कोई धड़का न हो॥

आपका—
बटुकेश्वर दत्त

दो पत्र

'यंग इन्डिया' में स्वर्गीय सुखदेव का एक पत्र जो उन्होंने फांसी के कुछ ही पूर्व महात्मा जी के पास भेजा था—प्रकाशित हुआ और उसका उत्तर भी महात्मा जी ने 'यंग इंडिया' के उसी अंक में प्रकाशित किया। श्री सुखदेव का पत्र हिंसात्मक विचार के पक्षपातियों और महात्मा जी का उत्तर हिंसात्मक सिद्धान्तों का परिचायक है अतएव पाठकों के विवेचनार्थ दोनों ही पत्रों का अविकल अनुवाद यहाँ दिया जा रहा है।

शहीद सुखदेव का पत्र

अत्यन्त सम्माननीय महात्मा जी,

आज कल के नये समाचारों से मालूम होता है कि आपने सन्धि चर्चा के बाद से क्रान्तिकारियों के नाम कई एक अपीलें निकाली हैं, जिनमें आपने उनसे कम से कम वर्तमान समय के लिये अपने क्रान्तिकारी आन्दोलन को रोक देने के लिए कहा है। वास्तविक बात यह है कि किसी आन्दोलन को रोक देने का काम कोई सैद्धान्तिक या अपने वश की बात नहीं है। समय २ की आवश्यकताओं का विचार करके आन्दोलन के नेता अपना और अपनी नीति का परिवर्तन किया करते हैं।

हमारा अनुमान है कि सन्धि के वार्तालाप के समय आप एक क्षण के लिए भी यह बात न भूले होंगे कि यह समझौता

कोई समझौता नहीं हो सकता। मेरे ख्याल से इतना तो सभी समझदार व्यक्तियों ने समझ लिया होगा कि आपके सब सुधारों के मान लिये जाने पर भी देश का अन्तिम लक्ष्य पूरा न हो जायगा। कांग्रेस लाहौर कांग्रेस के प्रस्तावानुसार स्वतन्त्रता का युद्ध तब तक लगातार जारी रखने के लिये बाध्य है, जब तक पूर्ण स्वाधीनता न प्राप्त हो जाय। बीच बीच की सन्धियां और समझौते क्षणिक विराम मात्र हैं जिनमें अगली लड़ाई के लिये अधिकाधिक शक्ति संगठित करने का अवसर मिलता है। उपरोक्त सिद्धान्त पर ही किसी प्रकार का समझौता या विराम सन्धि की कल्पना की जा सकती है।

समझौते के लिये उपयुक्त अवसर का तथा शर्तों का विचार करना नेताओं का काम है। यद्यपि लाहौर के पूर्ण स्वाधीनता वाले प्रस्ताव के होते हुए भी आपने अपना आन्दोलन स्थगित कर दिया है, फिर भी वह प्रस्ताव ज्यों का त्यों बना हुआ है। 'हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी' के क्रान्तिकारियों का ध्येय इस देश में सोशलिस्ट प्रजातन्त्र प्रणाली स्थापित करना है। इस ध्येय में संशोधन के लिये जरा भी गुन्जायश नहीं है। वे तो अपना संग्राम जब तक कि ध्येय न प्राप्त हो जाय और आदर्शकी पूर्ण स्थापना न हो जाय तबतक बराबर जारी रखने केलिये बाध्य हैं। परन्तु वे परिस्थितियोंके परिवर्तनके साथ२ अपनी युद्ध नीति भी बदलते रहना जानते हैं। क्रांतिकारियों का युद्ध भिन्न २ अवसरों पर भिन्न भिन्न स्वरूप धारण कर लेता है। कभी वह

प्रकट रूप रखता है, कभी गुप्त रूप धारण कर लेता है। कभी केवल आन्दोलन के रूप में हो जाता है। और कभी जीवन और मृत्यु का भयानक संग्राम करने लग जाता है। वर्तमान परिस्थितियों में क्रांतिकारियों के सामने आन्दोलन रोक देने के लिए कुछ विशेष कारणों का होना तो आवश्यक ही है। परन्तु आपने हम लोगों के सामने ऐसा कोई निश्चित कारण उपस्थित नहीं किया। जिस पर विचार करके हम अपना आन्दोलन रोक दें। केवल भावुक अपीलें क्रांतिकारियों के संग्राम में कोई प्रभाव नहीं पैदा कर सकतीं।

समझौता करके आपने अपना आन्दोलन स्थगित कर दिया है जिसके फलस्वरूप आपके आन्दोलन के सब बन्दी छूट गये हैं? परन्तु क्रांतिकारी बंदियों के विषय में आप क्या कहते हैं। सन १९१५ के गदर पार्टी वाले राजबन्दी अब भी जेलों में सड़ रहे हैं, यद्यपि उनकी सजायें पूरी हो चुकी हैं। कोड़ियों मार्शलला के बंदी अब भी जीवित ही कब्रों में गड़े हुये हैं। इसी प्रकार दर्जनों बब्बर अकाली कैदी जेल यातना भोग रहे हैं। देवगढ़, काकोरी, मछुवा बाजार और लाहौर षड्यन्त्र केस के अनेकों राजबंदी अब भी जेलों में बंद हैं। आधे दर्जन से अधिक षड्यन्त्र केस लाहौर, दिल्ली, चटगांव, बम्बई, कलकत्ता आदि स्थानों में चल रहे हैं। क्रांतिकारी अनेकों फरार हैं, जिनमें बहुत सी स्त्रियां हैं। आधे दर्जन से अधिक कैदी अपनी फांसियों की बाट जोह रहे हैं। इन सब के विषय में आप क्या

कहते हैं ? लाहौर षड्यन्त्र केस के तीन राजबन्दी, जिन्हें फांसी देने का हुक्म हुआ है और जिन्होंने संयोगवश देश में बहुत बड़ी ख्याति प्राप्त कर ली है, क्रांतिकारी दल के सब कुछ नहीं हैं। दल के सामने केवल इन्हीं के भाग्य का प्रश्न नहीं है। वास्तव में इनकी सजाओं के बदल देने से देश का उतना कल्याण न होगा जितना कि इन्हें फांसी पर चढ़ा देने से होगा।

परन्तु इन सब बातों के होते हुये भी आप हमसे अपना आन्दोलन खींच लेने की सार्वजनिक अपीलें कर रहे हैं। अपना क्रान्तिकारी आन्दोलन क्यों रोक लें, इसका आपने कोई निश्चित कारण नहीं बताया। ऐसी परिस्थिति में आपकी इन अपीलों के निकालने का मतलब तो यही है, कि आप क्रांतिकारियों के आन्दोलन को कुचलने में नोकरशाही का साथ दे रहे हैं। आप इन अपीलों के द्वारा स्वयं क्रांतिकारी दल में विश्वासघात और फूट की शिक्षा दे रहे हैं। अगर यह बात न होती, तो आप के लिये सब से अच्छा उपाय यह था कि आप कुछ प्रमुख क्रांतिकारियों से मिल कर इस विषय में सम्पूर्ण बातचीत कर लेते। आपको उन्हें आन्दोलन खींच लेने की सलाह देने के पहले अपने तर्कों को समझानेका प्रयत्न करना चाहिये था। मेरा ख्याल है, कि साधारण जनसमुदाय की तरह आपको भी यह धारणा न होगी कि क्रांतिकारी तर्कहीन होते हैं और इन्हें केवल विनाशकारी कार्यों में ही आनन्द आता है। हम आपको बतला देना चाहते हैं कि यथार्थ में बात इसके बिलकुल विपरीत है। वे प्रत्येक कदम आगे बढ़ाने के

पहले अपनी चतुर्दिक परिस्थितियों का विचार कर लेते हैं। उन्हें अपनी जिम्मेदारी का ज्ञान हर समय बना रहता है। वे अपने क्रांतिकारी विधान में रचनात्मक अंश की उपयोगिता को मुख्य स्थान देते हैं, यद्यपि मौजूदा परिस्थितियों में उन्हें केवल विनाशात्मक अंश की ओर ध्यान देना पड़ा है।

गवर्नमेंट क्रांतिकारियों के प्रति पैदा हो गई सार्वजनिक सहानुभूति तथा सहायता नष्ट करके किसी तरह उन्हें कुचल देना चाहती है। अकेले में वे सहज की कुचल दिए जा सकते हैं। ऐसी हालत में किसी प्रकार की भावुक अपील निकाल कर उनमें विश्वासघात और फूट पैदा करना बहुत अनुचित और क्राँति विरोधी कार्य होगा। इसके द्वारा गवर्नमेंट को, उन्हें कुचल डालने में प्रत्यक्ष सहायता मिलती है।

इसलिये आप से हमारी प्रार्थना है, कि या तो आप कुछ क्रांतिकारी नेताओं से, जो कि जेलों में हैं, इस विषय में कोई बातचीत करके कुछ निर्णय कर लीजिये या फिर अपनी अपीलें बंद कर दीजिये। कृपा करके उपरोक्त दो मार्गों में से किसी एक का अनुसरण कर लीजिये और जिसका अनुसरण कीजिये, उसे पूरे दिल से कीजिये। अगर आप उनकी सहायता नहीं कर सकते, तो कृपा करके उन पर रहम कीजिये, और उन्हें अकेला छोड़ दीजिये। वे अपनी रक्षा अपने आप कर लेंगे। वे अच्छी तरह से जानते हैं, कि भविष्य के राजनीतिक युद्ध में उनका नायकत्व निश्चित है। जन-समुदाय उनकी ओर

बराबर बढ़ता आ रहा है और वह दिन दूर नहीं है जब कि उनके नेतृत्व में और उनके झण्डों के नीचे जन-समुदाय उनके सोशलिस्ट प्रजातन्त्र के उच्च ध्येय की ओर बढ़ता हुआ दिखाई पड़ेगा।

या, यदि आप सचमुच उनकी सहायता करना चाहते हैं, तो उनको दृष्टिकोण समझाने के लिये उनसे बातचीत कीजिये और सम्पूर्ण समस्या पर विस्तार के साथ विचार कर लीजिये।

आशा है, आप उपरोक्त प्रार्थना पर कृपया विचार करेंगे और अपनी राय सर्व साधारण के सामने प्रकट कर देंगे।

आप का

"अनेकों में से एक"
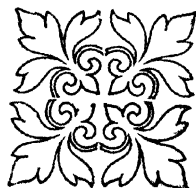
अनेकों में से एक (?)

महात्मा गाँधी का उत्तर

'अनेकों में से एक' द्वारा लिखित यह पत्र सुखदेव का पत्र है। श्रीयुत सुखदेव सरदार भगतसिंह के साथी थे। उपरोक्त पत्र उनकी मृत्यु के बाद मुझे मिला था। समयाभाव वश मैं इस पत्र को इससे पहले नहीं प्रकाशित कर सका। पत्र ज्यों का त्यों छाप दिया गया है।

पत्र का लेखक अनेकों में से एक नहीं है। अनेको राजनीतिक स्वाधीनताके लिए फाँसी नहींस्वीकार करते। राजनीतिक हत्या चाहे कितनी ही निन्दनीय क्यों न हो, परन्तु ऐसे भयानक कार्यों के लिए प्रेरित करने वालों से, उनका देश प्रेम और साहस छिपाये नहीं छिप सकता। हमें इस बात की आशा करनी चाहिये कि राजनीतिक हत्याका पंथ बढने न पावेगा। यदि स्वाधीनता प्राप्त करने का भारतीय प्रयोग सफल हो गया, जिसकी सफलता में कोई सन्देह नहीं है। तो राजनीतिक हत्या का पेशा दुनिया से सदैव के लिए उठ जायगा। जो हो, मैं तो इसी विश्वासको लेकर अपना काम कर रहा हूं। पत्र लेखक का यह कहना ठीक नहीं है कि मैंने क्रांतिकारियों से उनके आन्दोलन स्थगित कर देने के लिये केवल भावुक अपीलें की हैं, विपरीत इसके मेरा तो दावा है कि मैंने तो वैसा करने के ठोस कारण बतलाए हैं। यद्यपि उन

कारणों को मैं कई बार इस पत्र के कालमों में प्रकाशित कर चुका हूं, फिर भी उन्हें यहां दुहराता हूं:—

(१) क्रान्तिकारी कार्रवाइयों से हम ध्येय के निकट नहीं पहुँचे।

(२) इनके कारण देश का सैनिक व्यय बढ़ गया है।

(३) इनके कारण सरकार का दमनचक्र बढ़ गया है, जिससे देश का कोई लाभ नहीं हुआ है।

(४) जब जब कहीं क्रान्तिकारियों द्वारा कोई हत्या हुई है, तब तब उस स्थान पर उसका बुरा प्रभाव पड़ा है।

(५) क्रान्तिकारी कार्रवाइयों द्वारा जन-समुदाय की जागृति में कोई सहायता नहीं पहुँची।

(६) जन समुदाय पर इनके कार्यों का असर दो तरह से बुरा पड़ा है। एक तो जनता को अतिरिक्त व्यय का भार सहन करना पड़ा है दूसरे सरकार के प्रत्यक्ष क्रोध का निशाना बनना पड़ा है।

(७) भारत की भूमि तथा उसकी परम्परा क्रांतिकारी हत्याओं के उपयुक्त नहीं है। इस देश के इतिहास से जो शिक्षा मिलती है, उससे मालुम होता है कि राजनीतिक हिंसा यहां उन्नति नहीं कर सकती।

(८) यदि क्रान्तिकारी जन समुदाय को अपने मन में परिवर्तित कर लेने का विचार करते हैं, तो उस हालत में हमें स्वाधीनता

प्राप्त करने के लिये बहुत ज्यादा तथा अनिश्चित समय तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।

(९) यदि जन साधारण हिंसात्मक उपाय का समर्थक हो भी जाय तो उसका परिणाम अन्त में अच्छा नहीं हो सकता। यह उपाय जैसा कि दूसरे देशों में हुआ है। स्वयं उस उपाय के संचालकों को ही नष्ट कर देता है।

(१०) क्रांतिकारियों के सामने उनके विपरीत उपाय अहिंसा की सार्थकता का भी प्रत्यक्ष प्रदर्शन हो चुका है। उन्होंने देखा होगा कि अहिंसात्मक आदोलन, क्रांतिकारियों की स्फुट हिंसा तथा कुछ कुछ स्वयं अहिंसात्मक आंदोलन वालों की हिंसा के होते हुये भी कैसे बराबर अपनी गति पर चलता रहा।

(११) क्रांतिकारी मेरी इस बात को मानते हैं, कि उनके आंदोलन ने अहिंसात्मक आंदोलन को कोई लाभ नहीं पहुंचाया बल्कि हानि ही पहुँचाई है। यदि देश का वातावरण पूर्ण रीति से शांत रहता तो हम अपने लक्ष्य को अब से पहले ही प्राप्त कर चुके होते।

मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि उपरोक्त बातें ठोस सत्य हैं, केवल भावुक अपीलें नहीं है। पत्र लेखक ने, मैंने क्रांतिकारियों से अब तक जो सार्वजनिक अपीलें की हैं, उनका विरोध किया है। लेखक का कहना है कि इन सार्वजनिक अपीलों को निकाल कर मैंने नौकरशाही को क्रांतिकारियों के आंदोलन दबाने में सहायता की है। नौकरशाही को क्रांतिकारी आंदोलन दबाने के

मेरी सहायता की आवश्यकता नहीं है। वह तो अपने अस्तित्व के लिए क्रांतिकारियों और मुझसे, दोनों से लड़ रही है। उसे अहिंसात्मक आन्दोलन हिंसात्मक आँदोलन की अपेक्षा अधिक भयानक मालूम होता है। वह हिंसात्मक आंदोलन का सामना करना तो जानती है परन्तु अहिंसात्मक से घबराती है। जिसने उसकी जड़ पहले ही से हिला दी है।

राजनीतिक हत्या करने वाले व्यक्ति अपने भीषण जीवन पथ पर पैर रखने के पहले ही समझ लेते हैं, कि उन्हे अपने कार्यों में कौनसा मूल्य देना पड़ेगा। ऐसी अवस्था में सम्भवतः मेरा कोई भी कार्य उनकी स्थिति को किसी प्रकार से अधिक आशंका जनक नहीं बना सकता।

यह जान कर कि क्रांतिकारी दल अपनी कार्रवाइयों को छिप कर करता है, मेरे पास उस दल के अज्ञात सदस्यों तक अपील पहुँचाने का, सिवा सार्वजनिक रूप से लिखने के और कोई दूसरा उपाय नहीं रह जाता। मैं कह सकता हूं कि मेरी सार्वजनिक अपीलें बिल्कुल निरर्थक नहीं गईं। मेरे सहयोगियों में पहले के बहुत से क्रांतिकारी हैं।

पत्र लेखक की शिकायत है कि सत्याग्रही, राजबन्दियों के अतिरिक्त दूसरे राजबन्दी नही छोड़े गए। यंग इण्डिया के पृष्ठों में लिख कर बतला चुका हूं कि किन कारणों से अन्य राजनीतिक बन्दियों के विषय में मैं ज्यादा जोर नहीं दे सका। स्वयं मैं

तो सब बन्दियों के छूट जाने के पक्ष में हूं, और मैं उनके छुटकारे के लिए कोई प्रयत्न उठा नहीं रक्खूंगा। मुझे मालूम है कि कुछ बन्दियों को तो अब से बहुत पहले ही छूट जाना चाहिए था। कांग्रेस ने इस सम्बन्ध में एक प्रस्ताव भी पास किया है। उसने श्रीयुत नरीमन को अब तक के न छूटे हुए राजबन्दियों की नामावली बनाने का काम सौंप दिया है। नामावली तैयार हो जाते ही उन्हें छुड़ाने का प्रयत्न किया जायगा। परन्तु जो लोग छूट चुके है उन्हें क्रांतिकारी हत्याओं को रोक कर हमारी सहायता करनी चाहिए। हत्या और छुटकारा दोनों बातें साथ-साथ नहीं हो सकतीं। निस्सन्देह ऐसे भी राजबन्दी हैं, जिन्हें तो हर हालत में छुड़ाना पड़ेगा। मैं इस सम्बन्ध में लोगों को यह विश्वास दिला देना चाहता हूं कि राजबन्दियों के छुटकारे में देरी का कारण हमारी इच्छा की नहीं वरन योग्यता की कमी है। यह भी याद रहे, कि यदि स्थाई समझौता होगया तो सम्पूर्ण राजनीतिक बन्दियों को छोड़ना ही पड़ेगा। यदि स्थाई समझौता न हुआ, तो अभी जो लोग बाहर उनके छुड़ाके का प्रयत्न कर रहे हैं वे उन्हीं के साथ जेल के अन्दर दिखलाई पड़ेंगे।

— —

श्री सुखदेव का एक मित्र को पत्र

(असमाप्त)

'प्यारे भाई, बहुत दिनों से मेरे हृदय में कुछ ऐसे भाव उठ रहे थे जिन्हें कतिपय कारणों से मुझे अब तक दबाना पड़ा था; किंतु मैं अब अधिक उन्हें दबा नहीं सकता और अब ऐसा करना ठीक भी नहीं समझता हूं। मैं नहीं कह सकता, मेरे इस प्रकार के भावों को आप किस दृष्टि से देखेंगे। न मालूम आप उन पर ध्यान देंगे या नहीं। किंतु मैं जो ठीक समझता हूं वही कह रहा हूं। उनके अनुसार कार्य करना आपकी इच्छा पर है। यदि आप इस पत्र का उत्तर दें तो बहुत अच्छी बात हो। इससे लाभ यह होगा कि मेरा भ्रम निवारण हो जायगा और मुझे इस बात का पता चल जायगा कि जेल की चहारदीवारी के भीतर बन्द रहने से मेरी विचार शक्ति तो नष्ट नहीं होगई है। जिससे मैं व्यवहारिक क्षेत्र से दूर हट कर केवल हवाई किले बनानें में मस्त हूं।

कार्य

"हम लोगों के जेल में आने के बाद से, बाहर की आबहवा कुछ गर्म रही है। 'कार्य' के विषय में अखबारों से यह पता चलता है कि प्रत्येक प्राँत में विशेष कर पञ्जाब व बंगाल में परिस्थिति कठिन है वहां बम तो खेलसा होगया है। पहले कभी इतने कार्य नहीं किये गये थे। इन्हीं कार्यों के विषयमें मैं आपसे कुछ

कहना चाहता हूं, और इन "कार्यों" के सम्बन्ध में अपनी सम्मति प्रकट करने के उपरांत मैं अपनी संस्था की इस "कार्य" विषयक नीति को बताऊंगा।

"हम लोगों ने केवल दो "कार्य्य" किये, एक सांण्डर्स की हत्या और दूसरा असेम्बली में बमकाण्ड। इससे पहले भी हम लोगों ने दो तीन बार प्रयत्न किया था, किन्तु सफलता नहीं मिली थी। इस सम्बन्ध में मैं केवल इतना ही कहना चाहता हूं कि हम लोगों के कार्य तीन प्रकार के थे—(१) प्रचार, (२) धन, (३) विशेष। इन तीनों में हमारा विशेष ध्यान प्रचार कार्य की ओर था। अन्य दो पर आवश्यकता पड़ने ही पर ध्यान दिया जाता था। इससे मेरा मतलब यह नहीं है कि उनका महत्व कम था किन्तु हमारे अस्तित्व का उद्देश्य था प्रचार कार्य। अन्य दो प्रकार के कार्य्य हमारे उद्देश्य नहीं थे। इन तीनों विषयों को साफ साफ समझाने के लिए मैं आप के सामने ये तीन घटनायें रखता हूं--- (१) असेम्बली काण्ड, (२) पञ्जाब नेशनल बैंक की डकैती, (३) जोगेश चटर्जी को छुड़ाने का प्रयत्न।

प्रचार

"मैं पिछले दोनों प्रकार के कार्यों को छोड़ कर यहां पर प्रचार कार्य के ऊपर विचार करना चाहता हूं। प्रचार शब्द से शायद इस प्रकार के कार्यों का बोध नहीं होता है। असल में ये कार्य जनता की इच्छा के अनुकूल ही होते थे। उदाहरणार्थ सांण्डर्स की हत्या का ही कार्य ले लीजिए। जब लाला जी पर

लाठी चलाई गई, तो सारे देश में बहुत ही खलबली मच गई। सरकार आग में और भी घी छिड़कने लगी। जनता बहुत ही असन्तुष्ट हो गई। जनता का ध्यान विप्लववादियों की ओर आकर्षित करने का अच्छा मौका हम लोगों के हाथ में था।

"सबसे पहले हम लोगों ने सोचा कि एक आदमी पिस्तौल लेकर जाय और स्काट को मार कर अपना आत्म समर्पण कर दे। अपने बयान में वह कहे कि जब तक विप्लववादी जीवित हैं तबतक राष्ट्रीय अपमान का बदला इसी प्रकार लिया जायगा। यह भी सोचा गया था कि तीन आदमी भेजे जांय क्योंकि मनुष्य की शक्ति बहुत कमजोर है। इसमें भी अपने बचाने का हमारा कोई प्रधान उद्देश नही था। हमारा विचार था कि हत्या के बाद यदि पुलिस हमारा पीछा करे तो उसका मुकाबला किया जाय। और जो जीता बचे, गिरफ्तार किया जावे, वह अपना बयान दे।

प्रयत्न

"यह विचार कर हम लोग डी० ए० वी० कालेज के होस्टल आये। कार्य के समय ऐसा प्रबन्ध किया गया था कि भगतसिंह जो स्काट को पहचान सकता था, पहली गोली दागे और राजगुरू थोड़ी दूर पर खड़ा हो कर भगतसिंह की रक्षा करे, और यदि कोई भगतसिंह पर आक्रमण करे तो राजगुरू उसका मुकाबला करे। इसके बाद भगतसिंह और राजगुरु दोनों भाग जांय। भागते समय पीछा करने वालों का मुकाबला करना सम्भव नहीं है। इस

लिए पण्डित जी उन पीछा करने वालों से उनकी रक्षा करने के लिए तैनात रहें। साथ ही साथ हम लोगों ने यह भी निश्चय किया था कि अपनी जान बचाने की अपेक्षा उसके मारने की ओर ही विशेष ध्यान दिया जाय। हम लोग नहीं चाहते थे कि हमारी गोली का शिकार अस्पताल में मरे। इसी कारण राजगुरु के गोली दागने पर भी भगतसिंहने तब तक गोली छोड़ना बन्द नहीं किया जब तक कि उसे इस बात का विश्वास नहीं हो गया कि उसका कार्य्य सिद्ध हो गया।

राजनैतिक हत्या

"हत्या के बाद भागना हमारा उद्देश्य नहीं था। हम लोग जनता में यह विचार उत्पन्न कर देना चाहते थे कि यह एक राजनैतिक हत्या थी और इसमें भाग लेने वाले मलंगी के साथी नहीं, बल्कि विप्लववादी थे। इसलिये हम लोगों ने इसके बाद पर्चे चिपकाए, और कुछ पर्चे प्रकाशनार्थ भी भेजे।

"दुख है कि हमारे नेताओं ने और न प्रेस वालों ने ही हमें कोई सहायता पहुंचाई, और सरकार को धोखा देने के लिए उन लोगों ने अपने देशवासियों को धोखा दिया। हम लोग चाहते थे कि वे जरा घुमा फिरा कर यह लिखें कि यह हत्या एक राजनीतिक हत्या थी और यह सरकार की नीति का फल था और सरकार ही ऐसे कार्यों के लिए उत्तरदाई थी। किन्तु यह सब बातें जानते हुए भी और मेरे बार बार कहने पर भी उन

लोगों ने ऐसा कहने का साहस नहीं किया। यह अच्छा हुआ कि हम लोग गिरफ्तार हो गए और जनता के सामने सारा भेद खुल गया। प्यारे भाई, केवल इसी कारण मैं अपनी गिरफ्तारी को अहोभाग्य समझता हूं। इस कार्य के कह चुकने के बाद अब मैं उसकी नीति के विषय में कुछ कहना चाहता हूं।

(ठीक इसी समय हमें मालूम हुआ है कि आज मामले का फैसला होजायगा। खाँ साहब और बख्शी जो यह पूछने के लिए आए कि हम लोग वहां जाना चाहते हैं या नहीं। हम लोगों ने इन्कार कर दिया।)

सार्वजनिक सहायता

'मैं दिखाना चाहता हूं कि हमारा विचार था कि जनता की इच्छा के अनुकूल ही हमारा कार्य हो, और वे सरकार के अत्याचारोंके विरोध में किए जायं, जिससे जनता इस ओर अपनी अनुभूति प्रदर्शित करे, और सहायता दे। इसी विचारसे हम लोग जनता में विप्लववादियों का आदर्श और उनकी चालों का प्रचार करना चाहते थे। ऐसे विचारों का उसके मुख से प्रकट होना, जो इन्हीं विचारों के लिए अब फांसी पर लटकने वाला है, अधिक गौरवप्रद है।

'हमारा यह विचार था कि सरकार से प्रकट रूप से मुकाबला पड़ने पर, हम लोग अपने संगठन के लिए एक निश्चित कार्यक्रम तैयार कर सकेंगे।

धन व्यवस्था

'मैं अन्य दो प्रकार के कार्यों के सम्बन्ध में अधिक नहीं कहना चाहता। धन की व्यवस्था के सम्बंध में, उसके लिए डकैतियां करने में अधिक ध्यान और शक्ति खर्च करने की आवश्यकता नहीं थी, जैसा कि बंगालियों ने किया है अनेक छोटी मोटी डकैतियाँ सफल नहीं हुई हैं। हम लोगों ने विचार करने के पश्चात अपने को जुएंबाज़ी के लिए तैयार किया, जिसमें यदि हम सफल होकर निकल आवें, तो एक बार ऐसा करके हम अपना कार्य ठीक तरह से कर सकेंगे, और धन की समस्या भी हल हो जायगी।

'साँण्डर्स की हत्या के बाद, धन के लिए हमें बहुत सोच विचार नहीं करना पड़ा। हम लोग शांतिपूर्वक जितना धन इकट्ठा कर सकते थे, डकैतियों से उतना नहीं मिलता था। आज कल तो यह बहुत आसान होगया है।

"विशेष कार्य अत्यन्त आवश्यकता पड़ने पर ही किए जाने चाहिए। उनकी संख्या भी परिमित ही होनी चाहिए।"

❀ ❀ ❀